स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

नवंबर, 2020
I.S.S.N. : 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Gover ii

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग, प्रभारी, वि.सा.प्र.

श्री एस. आर. ढलेटा,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं
विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

श्री ए. के. अवस्थी,
सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं डीन, विधि
संकाय लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

श्री एल. आर. सिंह,
प्रोफेसर एवं डीन, इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

सहायक संपादक : श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

ISSN 2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2020 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा.................................. द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

नवम्बर, 2020 अंक - 11

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

अविनाश शुक्ला

सत्यमेव जयते

विधि साहित्य प्रकाशन

(2020) 2 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

---

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.
दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्‌वारा प्रकाशित उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्च न्यायालयों द्‌वारा पारित प्रतिवेद्‌य निर्णय, जो अधिवक्ताओं, विधि छात्रों, न्यायाधीशों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से मैं आपका ध्यान **संजय कुमार** बनाम **भारत संघ और अन्य** [(2020) 2 सि. नि. प. 493] वाले मामले में माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्‌वारा तारीख 11 अक्तूबर, 2020 को पारित निर्णय की ओर आकर्षित करना चाहता हूं । इस निर्णय के माध्यम से माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रधानमंत्री आवास योजना के अंतर्गत सभी के लिए आवास (शहरी) के संबंध में प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी लोकतांत्रिक समाज में संगठित सामाजिक समुदाय के सदस्य के रूप में स्थायी आश्रय (आवास) उपलब्ध होना चाहिए, ताकि उसका शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास हो सके और वह लोकतंत्र में लाभदायक नागरिक के रूप में समान रूप से सहभागी हो सके । माननीय उच्च न्यायालय ने आगे विचार व्यक्त किया कि आश्रय के अधिकार का अर्थ मात्र किसी के सर पर छत का अधिकार नहीं है बल्कि उस समस्त अवसंरचना का अधिकार है जो उसको जीवित रहने और मानव के रूप में विकसित होने के समर्थ बनाता है । माननीय न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि आश्रय का अधिकार जीवन के अधिकार की अनिवार्य अपेक्षा के रूप में प्रयोग किया जाता है और उसके बारे में यह अवधारणा की जानी चाहिए कि वह मूल अधिकार के रूप में प्रत्याभूत अधिकार है । माननीय न्यायालय ने आगे यह भी अभिनिर्धारित किया कि आश्रय (आवास) के अधिकार के अंतर्गत निवास योग्य पर्याप्त स्थान, सुरक्षित और शालीन संरचना, स्वच्छ

और शालीन पास-पड़ोस, पर्याप्त प्रकाश, शुद्ध वायु और जल, बिजली, स्वच्छता और अन्य नागरिक सुविधाएं, जैसे कि सड़क इत्यादि भी सम्मिलित होते हैं । इस प्रकार से माननीय उच्च न्यायालय का यह विचार है कि प्रत्येक मनुष्य के लिए आश्रय (आवास) मात्र उसके जीवन और अंगों का संरक्षण नहीं है, अपितु यह उसका घर है, जहां उसको शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास का अवसर प्राप्त होता है । इसके अतिरिक्त माननीय उच्च न्यायालय ने यह विचार भी व्यक्त किया कि संपत्ति का कब्जा समाज में वैभव और प्रभाव का आधार और प्रतीक होता है, अत: गरीबों के लिए आवास का अधिकार संविधान द्वारा प्रत्याभूत किया गया है, जिससे कि उनका जीवन अर्थपूर्ण और गरिमा के साथ निर्वाहयोग्य हो सके ।

पत्रिका में समायोजित सामग्री और गुणवत्ता के संबंध में सभी पाठकों के विचार अपेक्षित हैं । अगली पत्रिका के संपादन के समय उनके विचारों पर ध्यान दिया जाएगा ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

नवंबर, 2020

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अशोक कुमार और अन्य **बनाम** रमेश चंद्र और एक अन्य	603
एस. एस. कंपनी (मैसर्स) और एक अन्य **बनाम** जिला मजिस्ट्रेट/कलेक्टर, बिजनौर और अन्य	552
ओल्गा डिसूजा और अन्य **बनाम** नीतिन डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड, गोवा और अन्य	582
नीलम देवी (श्रीमती) **बनाम** विकास सिंह	518
प्रिंस फिलिंग स्टेशन (मैसर्स) **बनाम** भारत संघ और अन्य	570
बसंती देव **बनाम** उत्तराखंड राज्य और अन्य	578
संजय कुमार **बनाम** भारत संघ और अन्य	493

संसद् के अधिनियम

राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 11

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 (1984 का 66)

– धारा 19 – अपील – अधीनस्थ न्यायालय द्वारा इस तथ्य पर विचार करने में विफल रहना कि वादी-प्रत्यर्थी और उसके परिवार के सदस्य दहेज के लिए प्रतिवादी-अपीलार्थी का उत्पीड़न कर रहे थे, जिस कारणवश पत्नी द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई और साक्ष्य के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि पत्नी सदैव पति के साथ निवास की इच्छुक थी और वर्तमान में भी इच्छुक है और पति द्वारा उसकी उपेक्षा और परित्याग किया गया – पत्नी के परिवार के सदस्यों द्वारा लड़ाई-झगड़े के संबंध में किए गए अभिकथनों और दोनों पक्षों द्वारा एक दूसरे के विरुद्ध लगाए गए व्यभिचार के आरोपों पर कुटुम्ब न्यायालय द्वारा अविश्वास किया जाना, फिर भी अभिलेख पर बिना किसी तर्कपूर्ण साक्ष्य के विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित किया जाना – विद्वान् कुटुंब न्यायालय द्वारा इस आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान किया जाना कि पत्नी ने पति का परित्याग कर दिया था और अपने माता-पिता के घर में रहने लगी थी, किंतु वह पति द्वारा दहेज के कारण उत्पीड़न किए जाने और पत्नी द्वारा पति के साथ जीवन-यापन की इच्छा के संबंध में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विचार करने में असफल रहे – विवाह-विच्छेद की डिक्री अपास्त किए जाने योग्य है ।

नीलम देवी (श्रीमती) बनाम **विकास सिंह** 518

– धारा 19 – अपील – अपीलार्थी-पत्नी अपनी स्वतंत्र इच्छा के कारण पृथक् रूप से जीवन यापन नहीं

पृष्ठ संख्या

कर रही बल्कि वह अपने पति के साथ जीवन यापन के लिए सदैव तत्पर थी और वर्तमान में भी है – पति/वादी-प्रत्यर्थी इस तथ्य को साबित कर पाने में विफल रहा कि प्रतिवादी-अपीलार्थी ने उसके साथ क्रूरता कारित की या बिना किसी पर्याप्त कारण के उसका परित्याग किया – अपील मंज़ूर किए जाने योग्य है ।

नीलम देवी (श्रीमती) बनाम **विकास सिंह** 518

प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूत हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54)

– धारा 13(4), 14 और 17 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 226] – प्रतिभूत हित का प्रवर्तन – मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिभूत लेनदार की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता प्रदान करना – प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत हित के प्रवर्तन के विरुद्ध अपील – उच्च न्यायालयों द्वारा ऐसे अनेक मामलों पर विचार किया जाना निरंतर जारी है, जो 2002 के प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूत हित का प्रवर्तन अधिनियम के अंतर्गत उद्भूत होते हैं और जिनमें विचार किए जाने और अंतरिम आदेश पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ ऋण वसूली अधिकरण सक्षम हैं – अत: आनुकल्पिक अनुतोष की उपलब्धता के लिए सक्षम फोरम विद्यमान होने के कारण उच्च न्यायालय को अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी असाधारण अधिकारिता का प्रयोग नहीं करना चाहिए ।

एस. एस. कंपनी (मैसर्स) और एक अन्य बनाम **जिला मजिस्ट्रेट/कलेक्टर, बिजनौर और अन्य** 552

पृष्ठ संख्या

– धारा 13(4), 14 और 17 – प्रतिभूत हित का प्रवर्तन – न्यायालय का यह पवित्र कर्तव्य है कि वह इस बात को सुनिश्चित करे कि लोक धन, जिसे वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋणी को ऋणस्वरूप प्रदान किया जाता है, का दुरुपयोग या दुर्विनियोग न हो – न्यायालय को ऋण का लाभ प्राप्त करने वालों और उसके पुनर्संदाय के अनिच्छुक लोगों के पक्ष में अनुचित सहानुभूति दर्शित नहीं करनी चाहिए ।

एस. एस. कंपनी (मैसर्स) और एक अन्य बनाम **जिला मजिस्ट्रेट/कलेक्टर, बिजनौर और अन्य** 552

– धारा 13(4), 14 और 17 – प्रतिभूत हित का प्रवर्तन – उधार लेने वालों के लिए ऋण के पुनर्संदाय में विलंब के वास्तविक कारण हो सकते हैं, किंतु ऐसे मामलों को समुचित फोरमों, जिन्हें ऐसे मामलों पर विचार किए जाने के लिए सृजित किया गया है, द्वारा संबोधित किया जाना चाहिए और इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब नहीं लिया जाना चाहिए ।

एस. एस. कंपनी (मैसर्स) और एक अन्य बनाम **जिला मजिस्ट्रेट/कलेक्टर, बिजनौर और अन्य** 552

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47)

– धारा 34 – कब्जे के लिए वाद – मुकदमेबाजी के पूर्ववर्ती दौर में प्रतिवादियों के विरुद्ध पारित निष्कासन आदेश – मुकदमेबाजी के द्वितीय दौर में प्रतिवादियों द्वारा शाश्वत व्यादेश के लिए फाइल किया गया वाद, जिसमें प्रतिवादियों को वादग्रस्त भूमि से, विधि

पृष्ठ संख्या

की सम्यक् प्रक्रिया के सिवाय, बेदखल करने से वादियों को प्रतिषिद्ध किया जाना – मुकदमेबाजी के तृतीय दौर में प्रतिवादियों के पूर्ववर्ती हिताधिकारी का दावा न्यायालय द्वारा खारिज किया जाना – अत:, वादग्रस्त भूमि के संबंध में वादी का दावा मुकदमेबाजी के पूर्ववर्ती दौरों में पारित आदेशों के सामंजस्य में था, जो अंतिमता प्राप्त कर चुके हैं – वादी के पक्ष में पारित डिक्री उचित है ।

अशोक कुमार और अन्य बनाम **रमेश चंद्र और एक अन्य** 603

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 14 और 299 [सपठित 2016 के उत्तराखंड पंचायती राज अधिनियम की धारा 90(1)(ग)] – याची द्वारा जिला पंचायत अध्यक्ष पद पर निर्वाचन के बाद भी सरकारी ठेकेदार की हैसियत से कार्य करते रहना और सरकारी ठेके प्राप्त करते रहना – जिला पंचायत अध्यक्ष लोक सेवक होने के नाते सरकारी ठेके प्राप्त करने का हकदार नहीं है – उसका सरकारी ठेकेदार का रजिस्ट्रीकरण निरस्त किया जाना विधिसम्मत है ।

बसंती देव बनाम **उत्तराखंड राज्य और अन्य** 578

– अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – आवास और आश्रय के अधिकार

पृष्ठ संख्या

प्राण या दैहिक स्वतंत्रता के संरक्षण और भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने के प्रयोजनार्थ प्रत्याभूत मूल अधिकार है ।

संजय कुमार बनाम **भारत संघ और अन्य** 493

– अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – प्रधानमंत्री आवास योजना मलिन बस्ती के निवासियों के पुनर्वास और दुर्बल वर्गों के लिए वहन किए जाने योग्य मकानों का प्रबंध किए जाने के द्वारा शहरी क्षेत्रों के गरीबों की आवास संबंधी आवश्यकताओं को संबोधित करने के लिए ईप्सित हैं – अतः, इस योजना के उद्देश्य और दिशानिर्देश स्पष्टतः सभी के लिए आवास सुविधाएं सृजित किए जाने के उद्देश्य को दृष्टि में रखते हुए, विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों के गरीबों और मलिन बस्तियों में रहने वालों को सम्मिलित करते हुए, किसी भी प्रकार से जनहित के विपरीत नहीं कहे जा सकते ।

संजय कुमार बनाम **भारत संघ और अन्य** 493

– अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) और 38, 39 और 46 [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – राज्य द्वारा निम्न

पृष्ठ संख्या

आय वर्ग के लोगों के लिए आवास योजना – संपत्ति का वास्तविक कब्जा समाज में वैभव और प्रभाव का आधार और प्रतीक होता है, अतः गरीबों के लिए बंदोबस्त और आवास का अधिकार संविधान द्वारा प्रत्याभूत किया गया है, जिससे कि उनका जीवन अर्थपूर्ण और गरिमा के साथ निर्वाहयोग्य हो सके ।

संजय कुमार बनाम **भारत संघ और अन्य** 493

– अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – प्रत्येक मनुष्य के लिए आश्रय मात्र उसके जीवन और अंगों का संरक्षण नहीं है – यह उसका घर है, जहां उसको शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक रूप से विकास का अवसर प्राप्त होता है ।

संजय कुमार बनाम **भारत संघ और अन्य** 493

– अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – आश्रय के अधिकार में निवासयोग्य पर्याप्त स्थान, सुरक्षित और शालीन संरचना, स्वच्छ और शालीन पास-पड़ोस, पर्याप्त प्रकाश,

पृष्ठ संख्या

शुद्ध वायु और जल, बिजली, स्वच्छता और अन्य नागरिक सुविधाएं, जैसेकि सड़क इत्यादि सम्मिलित होते हैं ।

संजय कुमार बनाम **भारत संघ और अन्य** 493

– अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – आश्रय के अधिकार का अर्थ मात्र किसी के सर पर छत के अधिकार से नहीं है, बल्कि उस समस्त अवसंरचना के अधिकार से है, जो उसको जीवित रहने और मानव के रूप में विकसित होने के समर्थ बनाते हैं – जब आश्रय के अधिकार को जीवन के अधिकार की अनिवार्य अपेक्षा के रूप में प्रयोग किया जाता है, तो उसके बारे में यह अवधारणा की जानी चाहिए कि वह मूल अधिकार के रूप में प्रत्याभूत है ।

संजय कुमार बनाम **भारत संघ और अन्य** 493

– अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी लोकतांत्रिक समाज में संगठित सामाजिक समुदाय के सदस्य के रूप में स्थायी आश्रय उपलब्ध होना चाहिए, ताकि उसका शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास हो

पृष्ठ संख्या

सके और वह लाभकारी नागरिक के रूप में अपनी उत्कृष्टता में संवर्धन कर सके और वह लोकतंत्र में लाभदायक नागरिक के रूप में समान रूप से सहभागी हो ।

संजय कुमार बनाम **भारत संघ और अन्य** 493

– अनुच्छेद 226, 19(1)(छ) और 19(6)(i) – नागरिकों को कोई वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारबार करने का अधिकार – सामान्य अनुक्रम में किसी कारबारी को यह अधिकार नहीं है कि वह किसी अन्य प्रतियोगी कारोबारी को उसका कारबार चलाने के अधिकार का प्रयोग करने से प्रवारित किए जाने की ईप्सा करे – किसी व्यापार या कारबार में प्रतियोगिता निर्बंधनों, जो अनुज्ञेय हों और जिनको जनसाधारण के हित में अधिनियमित किसी विधि द्वारा अधिरोपित किया गया हो, के अध्यधीन होती हैं – कोई व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि कोई व्यक्ति ऐसा कोई कारबार या व्यापार न करे जिससे उसके व्यापार या कारबार प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो ।

प्रिंस फिलिंग स्टेशन (मैसर्स) बनाम **भारत संघ और अन्य** 570

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 39, नियम 1 [संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52] – अंतरिम व्यादेश के लिए आवेदन अस्वीकृत किया जाना – वादी द्वारा प्रतिवादियों द्वारा कराए जा रहे निर्माण के विरुद्ध अंतरिम व्यादेश की ईप्सा किया जाना, जिसको प्रदान किए जाने से न्यायालय द्वारा साम्यापूर्ण विचारणाओं के आधार पर, न कि गुणागुण के आधार पर इनकार किया

पृष्ठ संख्या

जाना – चूंकि इस मामले में लंबित वाद का सिद्धांत लागू होता है, अत: वादग्रस्त संपत्ति के बाबत समस्त निर्माण कार्य वादी द्वारा घोषणा के लिए फाइल किए गए वाद के परिणाम के अध्यधीन होंगे – अत: अंतरिम व्यादेश का आवेदन न्यायत: अस्वीकृत किया गया ।

ओल्गा डिसूज़ा और अन्य बनाम **नीतिन डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड, गोवा और अन्य** 582

संजय कुमार

बनाम

भारत संघ और अन्य

(2020 की जनहित याचिका संख्या 13950)

तारीख 11 अक्तूबर, 2020

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी और न्यायमूर्ति डा. योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – आवास और आश्रय के अधिकार प्राण या दैहिक स्वतंत्रता के संरक्षण और भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने के प्रयोजनार्थ प्रत्याभूत मूल अधिकार है ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – प्रधानमंत्री आवास योजना मलिन बस्ती के निवासियों के पुनर्वास और दुर्बल वर्गों के लिए वहन किए जाने योग्य मकानों का प्रबंध किए जाने के द्वारा शहरी क्षेत्रों के गरीबों की आवास संबंधी आवश्यकताओं को संबोधित करने के लिए ईप्सित हैं – अत:, इस योजना के उद्देश्य और दिशानिर्देश स्पष्टत: सभी के लिए आवास सुविधाएं सृजित किए जाने के उद्देश्य को दृष्टि में रखते हुए, विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों के गरीबों और मलिन बस्तियों में रहने वालों को

सम्मिलित करते हुए, किसी भी प्रकार से जनहित के विपरीत नहीं कहे जा सकते ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) और 38, 39 और 46 [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – राज्य द्वारा निम्न आय वर्ग के लोगों के लिए आवास योजना – संपत्ति का वास्तविक कब्जा समाज में वैभव और प्रभाव का आधार और प्रतीक होता है, अतः गरीबों के लिए बंदोबस्त और आवास का अधिकार संविधान द्वारा प्रत्याभूत किया गया है, जिससे कि उनका जीवन अर्थपूर्ण और गरिमा के साथ निर्वाहयोग्य हो सके ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – प्रत्येक मनुष्य के लिए आश्रय मात्र उसके जीवन और अंगों का संरक्षण नहीं है – यह उसका घर है, जहां उसको शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक रूप से विकास का अवसर प्राप्त होता है ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – आश्रय के अधिकार में निवासयोग्य पर्याप्त स्थान, सुरक्षित और शालीन संरचना, स्वच्छ और शालीन पास-पड़ोस, पर्याप्त प्रकाश, शुद्ध वायु और जल, बिजली, स्वच्छता और अन्य नागरिक सुविधाएं, जैसेकि सड़क इत्यादि सम्मिलित होते हैं ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3

द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – आश्रय के अधिकार का अर्थ मात्र किसी के सर पर छत के अधिकार से नहीं है, बल्कि उस समस्त अवसंरचना के अधिकार से है, जो उसको जीवित रहने और मानव के रूप में विकसित होने के समर्थ बनाते हैं – जब आश्रय के अधिकार को जीवन के अधिकार की अनिवार्य अपेक्षा के रूप में प्रयोग किया जाता है, तो उसके बारे में यह अवधारणा की जानी चाहिए कि वह मूल अधिकार के रूप में प्रत्याभूत है ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 और 19(1)(ङ) [सपठित प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत केंद्र सरकार और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश] – प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी लोकतांत्रिक समाज में संगठित सामाजिक समुदाय के सदस्य के रूप में स्थायी आश्रय उपलब्ध होना चाहिए, ताकि उसका शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास हो सके और वह लाभकारी नागरिक के रूप में अपनी उत्कृष्टता में संवर्धन कर सके और वह लोकतंत्र में लाभदायक नागरिक के रूप में समान रूप से सहभागी हो ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि वर्तमान रिट याचिका मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देशों, जिनको प्रधानमंत्री आवास योजना - सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी की गई विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित किया गया, को चुनौती दी गई है । इस रिट याचिका में विशेष रूप से 2016 की योजना के दिशानिर्देशों के खंड 1.4 को चुनौती दी गई है, जिसके अधीन राज्यों/संघ शासित क्षेत्रों को एक निर्धारित तारीख निश्चित करने के विवेकाधिकार प्रदान किए गए थे, जिस पर लाभार्थियों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी की गई विवरणिका के खंड 3.1, जो यह उपबंधित करता है कि आवेदक को भारत का नागरिक और जिला गाजियाबाद का निवासी होना चाहिए । आगे यह प्रार्थना भी की गई है कि प्रत्यर्थी संख्या 3 और 4 को आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लोगों के लिए निर्मित मकानों का आबंटन याची के पक्ष में किए जाने के

प्रयोजनार्थ उसके आवेदन पर विचार किया जाए और उस पर कार्रवाई की जाए । याची के काउंसेल ने दलील दी कि विवरणिका के खंड 3.1 के अधीन समाविष्ट पूर्वोक्त शर्तें और साथ ही योजना के दिशानिर्देशों और खंड 1.4 संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ड.), जो भारत के सभी नागरिकों को भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने का अधिकार प्रदान करता है, के अधीन याची के मूल अधिकार का अतिक्रमण करने वाले हैं । उन्होंने निवेदन किया कि ये निर्बंधन जनसामान्य के हित में नहीं हैं और पूर्णतया अयुक्तियुक्त हैं और इसलिए विधि की दृष्टि में मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं हैं । उन्होंने आगे निवेदन किया कि याची को जिला हापुड़ का निवासी होने के नाते और साथ ही आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग की कोटि से संबंधित होने के कारण इस योजना के परिक्षेत्र से अपवर्जित नहीं किया जा सकता । याची ने अहमदाबाद म्युनिसिपल कारपोरेशन बनाम नवाब खान, गुलाब खान और अन्य का अवलंब अपनी दलीलों के समर्थन में लिया । प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने याची की तरफ से दी गई दलीलों का दृढ़तापूर्वक विरोध यह निवेदन करते हुए यह निवेदन किया कि 'प्रधानमंत्री आवास योजना' एक योजना है, जो सभी के लिए आवास उपलब्ध कराए जाने के लिए उपबंधित करती है और शहरी क्षेत्रों में रहने वाले गरीबों की आवास से संबंधित आवश्यकताओं को संबोधित किए जाने के लिए आशयित है । उन्होंने निवेदन किया कि इस योजना का कार्यान्वयन शहरी क्षेत्रों के संबंध में किया जाना आशयित है और योजना के दिशानिर्देशों के अंतर्गत समाविष्ट शर्तों का उद्देश्य विनिर्दिष्ट शहरी क्षेत्रों में लाभ प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ लाभार्थियों की पहचान करना है और इसलिए ये शर्तें जनसामान्य के हित में है और यह नहीं कहा जा सकता कि इन शर्तों में ऐसा कोई निर्बंधन समाविष्ट है जो अयुक्तियुक्त हो । उन्होंने निवेदन किया कि उन आधारों, जिनका अवलंब याची द्वारा लिए जाने की ईप्सा की गई, विधितः मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है और रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य है । रिट याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – हम इस बात का उल्लेख करते हैं कि अनुच्छेद 19(1)(ड.) के अधीन जो प्रत्याभूत किया गया है, वह भारत के राज्य

क्षेत्र के किसी भाग में निवास करने और बस जाने का अधिकार है, तथापि, अनुच्छेद 19(5) को दृष्टि में रखते हुए यह अधिकार राज्य को जनसामान्य के हितों को ध्यान में रखते हुए युक्तियुक्त निर्बंधन अधिरोपित करने से प्रवारित नहीं करता । कोई भी निर्बंधन, जो जनसामान्य के हित में है, हमारे विचार में अनुच्छेद 19(1)(ङ.) के अधीन प्रत्याभूत अधिकारों के अतिक्रमण के कारण चुनौती का आधार नहीं होगा । योजना दिशानिर्देश और विवरणिका में समाविष्ट शर्तें स्पष्टत: दर्शित करते हैं कि वे शर्तें, जिनको याची द्वारा चुनौती देने की ईप्सा की गई है, योजना/मिशन के उद्देश्यों के अग्रसरण में है और जो अनिवार्यत: मलिन बस्तियों में रहने वालों के पुनर्वास, कमजोर वर्गों के लोगों के लिए वहन किए जाने योग्य आवास को प्रोन्नत किए जाने सम्मिलित करते हुए शहरी क्षेत्रों के गरीबों की आवास आवश्यकताओं को संबोधित करते हैं । योजना के अधीन लाभार्थी परिवार को अर्ह होने के लिए स्वामित्वाधीन भारत के किसी भाग में कोई पक्का मकान नहीं होना चाहिए, जिससे स्पष्टत: योजना के उद्देश्य और दृष्टिकोण दर्शित होता है और जो शहरी क्षेत्रों में रहने वाले गरीबों के लिए आवास उपलब्ध कराए जाने के प्रयोजनार्थ है । इस योजना का कार्यान्वयन शहरी क्षेत्रों में क्षेत्रवार 2011 की जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए किया जाना है और बाद में अधिसूचित कस्बे भी इस योजना में सम्मिलित किए जाने के लिए अर्ह होंगे । इस योजना के अधीन कार्यान्वयन प्रक्रिया लाभार्थियों की पहचान और शहर, राज्य और केंद्रीय सरकार के स्तर पर योजना के निरीक्षण के लिए उपबंधित करती है । योजना का कार्यान्वयन और योजना दिशानिर्देशों के अंतर्गत लाभार्थियों की पहचान और राज्य सरकार द्वारा जारी तारीख 21 मार्च, 2016 के आदेश को प्रत्येक शहरी ईकाई के लिए तैयार की गई विस्तृत परियोजना रिपोर्ट के आधार पर किया जाना है । राज्य सरकार द्वारा जारी तारीख 21 मार्च, 2020 के आदेश और साथ ही विवरणिका के आधार पर योजना दिशानिर्देशों से यह पूर्णत: स्पष्ट हो जाता है कि योजना को शहरी क्षेत्रों के गरीबों की आवासीय आवश्यकताओं को संबोधित किए जाने के उद्देश्य से लागू किया जा रहा है और लाभार्थियों की पहचान के संबंध में योजना के अधीन शर्तें इस अपेक्षा के अंतर्गत हैं कि लाभार्थियों को शहरी का निवासी होना चाहिए,

जिसके लिए इस योजना को वृहत्तर जनहित में योजना के प्रभावी कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ कार्यान्वित किया जा रहा है । अतः हमारा यह विचार है कि दिशानिर्देशों और साथ ही विवरणिका के अंतर्गत शर्तों के बाबत यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि वे ऐसे निर्बंधन अधिरोपित करने वाली हैं, जिनको अयुक्तियुक्त कहा जा सकता हो या वे किसी भी प्रकार से याची को अनुच्छेद 19(1)(ड.) के अधीन भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने के अधिकार के अतिक्रमण का प्रभाव रखते हों । अतः, यह देखा गया है कि आवास और आश्रय के अधिकार को अनुच्छेद 21 और 19(1)(ड.) के अधीन प्रत्याभूत मूल अधिकारों के भाग के रूप में अनेक न्यायिक विनिश्चयों की श्रृंखला में सम्मिलित किया गया है । हमारे समक्ष उपस्थित मामले में प्रश्नगत योजना और सभी के लिए आवास (शहरी) मलिन बस्ती के निवासियों के पुनर्वास और दुर्बल वर्गों के लिए वहन किए जाने योग्य मकानों को प्रोन्नत किए जाने के लिए उपबंधित करने के द्वारा शहरी क्षेत्रों के गरीबों की आवास संबंधी आवश्यकताओं को संबोधित करने के लिए ईप्सित हैं । अतः, इस योजना के उद्देश्य और दिशानिर्देश स्पष्टतः सभी के लिए आवास सुविधाएं सृजित करने के उद्देश्य को संबोधित किए जाने को दृष्टि में रखते हुए, विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों के गरीबों और मलिन बस्तियों में रहने वालों को सम्मिलित करते हुए, विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में उनकी पहचान के लिए उपबंधित किए जाने के द्वारा, योजना के दिशानिर्देश किसी भी प्रकार से जनहित के विपरीत नहीं कहे जा सकते, जिस आधार पर उनको याची को प्रत्याभूत मूल अधिकारों में से किसी भी अधिकार का उल्लंघन करने वाला जैसाकि उसके द्वारा कहा गया है, कहा जा सके । (पैरा 20, 21, 22, 23, 30 और 31)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[1997] ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 152 = (1997) 11 एस. सी. सी. 12 :
अहमदाबाद म्युनिसिपल कारपोरेशन बनाम
नवाब खान, गुलाब खान और अन्य ; 5

[1996] (1996) 2 एस. सी. सी. 549 = ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 1051 :
चमेली सिंह और अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ; 29

[1995] (1995) (सप्ली.) 2 एस. सी. सी. 182 = जे. टी. 1995 (2) एस. सी. 373 :
पी. जी. गुप्ता बनाम **गुजरात राज्य और अन्य** ; 28

[1986] ए. आई. आर. 1986 एस. सी. 180 = [1985] सप्ली. (2) एस. सी. आर. 51 :
ओल्गा टैलीज और अन्य बनाम **बाम्बे म्युनिसिपल कारपोरेशन और अन्य** ; 26

[1980] (1980) 1 एस. सी. सी. 520 :
मैसर्स शांति स्टार बिल्डर्स बनाम **नारायण खिमाला टोटामी और अन्य** । 27

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2020 की जनहित याचिका संख्या 13950.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सुश्री अंकिता सिंघल और श्री सिद्धार्थ सिंघल

प्रत्यर्थियों की ओर से मुख्य स्थायी काउंसेल, सर्वश्री अरविन्द कुमार गोस्वामी और सुरेश सी. द्विवेदी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति डा. योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव ने दिया ।

न्या. श्रीवास्तव – याची के विद्वान् काउंसेल श्री सिद्धार्थ सिंघल, प्रत्यर्थी संख्या 3 के विद्वान् काउंसेल श्री एस. सी. द्विवेदी, प्रत्यर्थी संख्या 2 और 4 की ओर से उपस्थित विद्वान् स्थायी काउंसेल और

प्रत्यर्थी संख्या 1/भारत संघ की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल श्री अरविन्द्र कुमार गोस्वामी को सुना ।

2. वर्तमान रिट याचिका मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देशों, जिनको प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा और साथ ही प्रधानमंत्री आवास योजना के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी की गई विवरणिका के अंतर्गत अधिसूचित किया गया, को चुनौती दी गई है ।

3. इस रिट याचिका में विशेष रूप से 2016 की योजना के दिशानिर्देशों के खंड 1.4 को चुनौती दी गई है, जिसके अधीन राज्यों/संघ शासित क्षेत्रों को एक निर्धारित तारीख निश्चित करने के विवेकाधिकार प्रदान किए गए थे, जिस पर लाभार्थियों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी की गई विवरणिका के खंड 3.1, जो यह उपबंधित करता है कि आवेदक को भारत का नागरिक और जिला गाजियाबाद का निवासी होना चाहिए । आगे यह प्रार्थना भी की गई है कि प्रत्यर्थी संख्या 3 और 4 को आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लोगों के लिए निर्मित मकानों का आबंटन याची के पक्ष में किए जाने के प्रयोजनार्थ उसके आवेदन पर विचार किया जाए और उस पर कार्रवाई की जाए ।

4. याची के काउंसेल ने दलील दी कि विवरणिका के खंड 3.1 के अधीन समाविष्ट पूर्वोक्त शर्तें और साथ ही योजना के दिशानिर्देशों और खंड 1.4 संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ड.), जो भारत के सभी नागरिकों को भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने का अधिकार प्रदान करता है, के अधीन याची के मूल अधिकार का अतिक्रमण करने वाले हैं । उन्होंने निवेदन किया कि ये निर्बंधन जनसामान्य के हित में नहीं हैं और पूर्णतया अयुक्तियुक्त हैं और इसलिए विधि की दृष्टि में मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं हैं । उन्होंने आगे निवेदन किया कि याची को जिला हापुड़ का निवासी होने के नाते और साथ ही आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग की कोटि से संबंधित होने के कारण इस योजना के परिक्षेत्र से अपवर्जित नहीं किया जा सकता ।

5. याची ने **अहमदाबाद म्युनिसिपल कारपोरेशन** बनाम **नवाब खान,**

गुलाब खान और अन्य[1] का अवलंब अपनी दलीलों के समर्थन में लिया ।

6. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने याची की तरफ से दी गई दलीलों का दृढ़तापूर्वक विरोध यह निवेदन करते हुए यह निवेदन किया कि 'प्रधानमंत्री आवास योजना' एक योजना है, जो सभी के लिए आवास उपलब्ध कराए जाने के लिए उपबंधित करती है और शहरी क्षेत्रों में रहने वाले गरीबों की आवास से संबंधित आवश्यकताओं को संबोधित किए जाने के लिए आशयित है । उन्होंने निवेदन किया कि इस योजना का कार्यान्वयन शहरी क्षेत्रों के संबंध में किया जाना आशयित है और योजना के दिशानिर्देशों के अंतर्गत समाविष्ट शर्तों का उद्देश्य विनिर्दिष्ट शहरी क्षेत्रों में लाभ प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ लाभार्थियों की पहचान करना है और इसलिए ये शर्तें जनसामान्य के हित में है और यह नहीं कहा जा सकता कि इन शर्तों में ऐसा कोई निर्बंधन समाविष्ट है जो अयुक्तियुक्त हो । उन्होंने निवेदन किया कि उन आधारों, जिनका अवलंब याची द्वारा लिए जाने की ईप्सा की गई, विधितः मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है और रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य है ।

7. पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया ।

8. परस्पर विरोधी दलीलों का मूल्यांकन किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रत्यर्थी संख्या 1 की योजना के दिशानिर्देशों के अंतर्गत समाविष्ट शर्तें और प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी की गई विवरणिका पर विचार किया जाना चाहिए ।

9. मार्च, 2016 की योजना के दिशानिर्देश, जो अभिलेख पर उपलब्ध हैं, उपदर्शित करते हैं कि 'प्रधानमंत्री आवास योजना – सभी के लिए आवास (शहरी)' जो केंद्रीय सरकार द्वारा मलिन बस्तियों में निवास करने वालों को सम्मिलित करते हुए शहरी में रहने वाले गरीबों की आवास संबंधित आवश्यकताओं को संबोधित किए जाने के लिए आशयित है, को एक मिशन (कार्य) के रूप में निम्नलिखित स्पष्ट कार्यक्रमों के माध्यम से आरंभ किया गया है :–

---

[1] ए. आई. आर 1997 एस. सी. 152 = (1997) 11 एस. सी. सी. 12.

"(i) निजी निर्माताओं की भागीदारी के साथ मलिन बस्तियों की भूमि को संसाधन के रूप में प्रयोग करते हुए मलिन बस्तियों में निवास करने वालों का पुनर्वास ।

(ii) उधार के साथ संबद्ध परिदान के माध्यम से कमजोर वर्ग के लोगों के लिए वहन किए जाने योग्य आवास को प्रोन्नत किया जाना ।

(iii) सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के साथ भागीदारी में वहन किए जाने योग्य आवास उपलब्ध कराया जाना ।

(iv) किसी व्यक्ति के मकान के निर्माण/उसमें विस्तार से संबंधित लाभार्थियों के लिए परिदान ।"

10. इस योजना के प्रयोजनार्थ 'लाभार्थी' शब्द को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया गया है :–

"**लाभार्थी** : लाभार्थी परिवार ने पति, पत्नी और अविवाहित बच्चे समाविष्ट होंगे । लाभार्थी परिवार के स्वामित्वाधीन या तो उसके अपने या उसके परिवार के किसी सदस्य के नाम में भारत के किसी भाग में कोई पक्का मकान (सभी मौसमों का सामना करने योग्य रिहायशी ईकाई) नहीं होना चाहिए ।"

11. खंड 2.1 के अधीन उल्लिखित योजना 2011 की जनसंख्या के अनुसार समस्त कानूनी कस्बों को आच्छादित करती है और बाद में अधिसूचित कस्बे भी इस योजना/मिशन के अंतर्गत आच्छादित होने के लिए अर्ह होंगे ।

12. इस योजना के कार्यान्वयन के लिए प्रक्रिया योजना के दिशानिर्देशों के खंड 8 में उपबंधित है, जिसको नीचे उद्धृत किया गया है :–

"**8. कार्यान्वयन प्रक्रिया** :

8.1 प्रथम कदम के रूप में, राज्य/संघ शासित राज्यक्षेत्र एक करार ज्ञापन पर मिशन (कार्य) में भाग लेने के प्रयोजनार्थ आज्ञापक शर्तों और अन्य तौर-तरीकों पर सहमत होने के द्वारा हस्ताक्षर करेंगे । इस करार ज्ञापन की एक प्रति राज्य/संघ शासित

राज्य क्षेत्र और केंद्र के मध्य हस्ताक्षरित की जाएगी और यह इस योजना का संलग्नक-3 है ।

8.2 राज्य/संघ शासित क्षेत्र मंत्रालय को मिशन (कार्य) में शहरों को सम्मिलित किए जाने के प्रयोजनार्थ आवास और संसाधनों की अपेक्षाओं के व्यापक तौर पर निर्धारण के साथ प्रस्ताव भेजेंगे । मंत्रालय संशाधनों की उपलब्धता पर विचार करते हुए इन नगरों को सम्मिलित किए जाने का अनुमोदन प्रदान करेगा । तथापि, इस मिशन (कार्य) के उधार से जुड़े हुए परिदान घटक को संपूर्ण देश में मिशन (कार्य) को आरंभ किए जाने की तारीख से समस्त कानूनी शहरों/कस्बों में कार्यान्वित किया जाएगा ।

8.3 राज्य/शहर आवास की वास्तविक मांग का निर्धारण किए जाने के प्रयोजनार्थ उपयुक्त साधनों द्वारा मांग का सर्वेक्षण कराएंगे । राज्यों/शहरों को आवास की मांग के सर्वेक्षण के प्रयोजनार्थ ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर संभावित अस्थाई रूप से प्रवास करने वालों पर विचार करना चाहिए ताकि इन आवासीय योजनाओं का लाभ प्राप्त किया जा सके और प्रवासियों को लाभार्थियों की सूची से अपवर्जित किया जा सके । शहर मांग के सर्वेक्षण और अन्य उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर **सभी के लिए आवास योजना की कार्य योजना** तैयार करेंगे । **सभी के लिए आवास योजना की कार्य योजना** में दिशानिर्देशों के पैरा 3 में उल्लिखित चार शीर्ष योजनाओं में से चयनित किसी योजना के साथ शहरों अर्हता प्राप्त लाभार्थियों द्वारा आवास की मांग समाविष्ट होनी चाहिए । लाभार्थियों के संबंध में सूचना राज्यों/संघ शासित क्षेत्रों द्वारा समुचित प्रपत्रों में संगृहीत की जानी चाहिए और यह सूचना संलग्नक 4 में समाविष्ट होनी चाहिए । सभी के लिए आवास योजना की कार्य योजना तैयार करते समय राज्यों/संघ शासित क्षेत्रों और कार्यान्वयन करने वाले अभिकरणों को वहन किए जाने योग्य आवासों पर भी विचार करना चाहिए, जो शहर में पहले से उपलब्ध हैं, चूंकि जनसंख्या के आंकड़ों के आधार पर यह ज्ञात हुआ है कि बड़ी संख्या में मकान खाली पड़े हैं ।

8.4 अभिप्रेत लाभार्थियों के जनधन योजना/अन्य बैंक खातों की संख्या और आधार संख्या/मतदाता पहचान कार्ड/कोई अन्य विशिष्ट पहचान विवरणिका या लाभार्थियों के पैतृक जिले के राजस्व प्राधिकारी द्वारा जारी किए गए मकान स्वामित्व प्रमाणपत्र इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए कि किसी एक व्यक्ति परिवार को बारंबार लाभ प्रदान न किया जाए, सभी के लिए मकान की कार्य योजना के डाटाबेस (आंकड़ा संग्रह) में एकीकृत किए जाएंगे । लाभार्थियों का विधिमान्यकरण राज्य/संघ शासित क्षेत्रों द्वारा किया जाएगा और तद्द्वारा परियोजनाओं की तैयारी और उनके अनुमोदन के समय उनकी अर्हता को सुनिश्चित किया जाएगा ।

8.5 राज्य/शहर बाद में सभी के लिए आवास योजना की कार्य योजना के आधार पर संसाधनों की उपलब्धता और पूर्वविक्ता को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2022 तक वार्षिक कार्यान्वयन योजनाएं कार्यों को विभाजित करते हुए तैयार करेंगे । बड़े शहरों के लिए सभी के लिए आवास योजना की कार्य योजना उपनगर (वार्ड/जोन इत्यादि) स्तर पर संबद्ध राज्य/संघ शासित क्षेत्र की सरकार के अनुमोदन के साथ तैयार कर सकते हैं ।

8.6 मांग के सर्वेक्षण के परिणाम, सभी के लिए आवास की कार्य योजना के प्रारूप और वार्षिक कार्यान्वयन योजना के प्रारूप पर विधायकों और सांसदों को सम्मिलित करते हुए क्षेत्र के स्थानीय जन प्रतिनिधियों के साथ चर्चा की जानी चाहिए ताकि उनके विचारों पर भी योजनाओं और लाभार्थियों की सूची को अंतिम रूप दिए जाते समय पर्याप्त रूप से विचार किया जा सके ।

8.7 वे शहर, जिन्होंने मलिन बस्ती मुक्त नगर-योजना की कार्य योजना या आवासन पर उपलब्ध आंकड़ों की सहायता से कोई अन्य आवास योजना तैयार कर ली है, को विद्यमान योजना और आंकड़ों का प्रयोग सभी के लिए आवास की कार्य योजना तैयार किए जाने के प्रयोजनार्थ करना चाहिए । विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत निर्मित मकानों की गणना सभी के लिए आवास की कार्य योजना और वार्षिक कार्यान्वयन योजना तैयार किए जाते समय की

जानी चाहिए । सभी के लिए आवास की कार्य योजना तैयार किए जाते समय तैयार किया गया प्रवाह चार्ट नीचे प्रस्तुत किया गया है । सभी के लिए आवास की कार्य योजना और वार्षिक कार्यान्वयन योजना के प्रपत्रों को संलग्नक 5 और 6 में पृथक्-पृथक् दर्शित किया गया है ।"

13. योजना के खंड 8 के अधीन कार्यान्वयन प्रक्रिया में यह परिकल्पित किया गया है कि राज्य/संघ शासित क्षेत्र मंत्रालय को आवास और संसाधनों की अपेक्षा के व्यापक निर्धारण के साथ योजना में शहरों को सम्मिलित किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रस्ताव भेजेंगे और मंत्रालय संसाधनों की उपलब्धता पर विचार करते हुए उन शहरों को सम्मिलित किए जाने का अनुमोदन प्रदान करेगा । राज्य/संघ शासित क्षेत्र को आवास की वास्तविक मांग के निर्धारण के लिए उपयुक्त साधनों के माध्यम से मांग का सर्वेक्षण कराना होगा और (योजना के अधीन कार्यान्वयन प्रक्रिया में) यह उपबंधित किया गया है कि राज्य/संघ शासित क्षेत्र मांग सर्वेक्षण की पुष्टि किए जाने के प्रयोजनार्थ मात्र आवास योजना का लाभ प्राप्त किए जाने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों को संभावित अस्थायी प्रवास पर विचार करेंगे और ऐसे प्रवासियों को लाभार्थियों की सूची से अपवर्जित कर देंगे । इस योजना के अंतर्गत यह भी उपबंधित किया गया है कि एक ही विशिष्ट परिवार को बारंबार लाभ प्रदान किए जाने को रोके जाने के प्रयोजनार्थ आशयित लाभार्थियों के विशिष्ट पहचान विवरणों, जैसेकि जनधन योजना/बैंक खाता संख्या, आधार संख्या, मतदाता पहचान पत्र या लाभार्थी के पैत्रक जिले के राजस्व प्राधिकारियों द्वारा जारी मकान के स्वामित्व प्रमाणपत्र सभी के लिए मकान के डाटाबेस में समेकित किया जाएंगे । लाभार्थियों की अभिपुष्टि राज्यों/संघ शासित क्षेत्रों और नगरीय स्थानीय निकायों द्वारा अर्हता सुनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ की जानी होती है । पुनः, सभी के लिए आवास कार्य योजना के आधार पर ही राज्यों/संघ शासित क्षेत्रों को बाद में संसाधनों की उपलब्धता और प्राथमिकताओं को दृष्टि में रखते हुए वर्ष 2022 तक कार्यों को विभाजित करते हुए वार्षिक कार्यान्वयन योजनाएं तैयार करनी होती हैं । जहां तक बड़े नगरों का संबंध है, सभी के लिए आवास कार्य योजना और वार्षिक कार्यान्वयन

योजनाओं को संबद्ध राज्य/संघ शासित क्षेत्र सरकार के अनुमोदन के साथ उपनगर (वार्ड/जोन) स्तर पर तैयार किया जा सकता है । यहां पर यह भी उपबंधित किया गया है कि मांग के सर्वेक्षण का परिणाम सभी के लिए आवास कार्य योजना प्रारूप और वार्षिक कार्यान्वयन योजना प्रारूप पर क्षेत्र के विधायक और सांसद को सम्मिलित करते हुए स्थानीय प्रतिनिधियों से विचार-विमर्श किया जाना होता है, ताकि इस बात को सुनिश्चित किया जा सके कि उनके विचारों पर योजनाओं और लाभार्थियों की सूची को अंतिम रूप प्रदान करते समय पर्याप्त रूप से ध्यान दिया गया है । तत्पश्चात् सभी के लिए आवास कार्य योजना और वार्षिक कार्यान्यन योजनाओं को प्राधिकारियों के समक्ष अनुमोदन के लिए प्रस्तुत किया जाता है और उनका प्रत्येक शहर में वार्षिक आधार पर किया जाना होता है और प्रत्येक शहर में सभी के लिए आवास कार्य योजना और संसाधनों की उपलब्धता के आधार पर विस्तृत परियोजना रिपोर्ट तैयार की जाती है । नगरीय स्थानीय निकायों से भी यह अपेक्षा की जाती है कि वे सभी के लिए आवास कार्य योजना को तैयार करते समय नगर विकास योजना, नगर सफाई योजना इत्यादि के उपबंधों को ध्यान में रखें ।

14. यह स्पष्टत: उपबंधित किया गया है कि लाभार्थी योजना के अंतर्गत सभी चार शीर्ष योजनाओं में से किसी एक योजना के अंतर्गत केवल एक लाभ प्राप्त करने के लिए अर्ह होगा और राज्य/संघ शासित सरकारों को इस बात को सुनिश्चित करने का उत्तरदायित्व प्रदान किया है कि लाभार्थी को मिशन (कार्य) के अंतर्गत किसी एक योजना से अधिक का लाभ प्रदान न किया जाए ।

15. मिशन के सभी तीन प्रक्रमों पर दृष्टि रखे जाने के बाबत यह उपबंधित किया गया है :-

> "मिशन के तीनों प्रक्रमों, शहर, राज्य और केंद्रीय सरकार पर दृष्टि रखे जाने के बाबत उपबंधित किया गया है । राज्यों और शहरों से यह अपेक्षा की गई है कि मिशन और उसकी विभिन्न योजनाओं की प्रगति पर दृष्टि रखे जाने के बाबत तंत्र विकसित करें ।"

16. प्रधानमंत्री आवास योजना -- सभी के लिए आवास (शहरी) के अधीन योजना के कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ राज्य सरकार ने तारीख 21 मार्च, 2016 के आदेश द्वारा मिशन की विभिन्न शीर्ष योजनाओं/संघटकों के अधीन प्रत्येक शहरी ईकाई के लिए विस्तृत परियोजना रिपोर्टें तैयार किए जाने के लिए उपबंधित करते हुए दिशानिर्देश जारी किए और राज्य और यह आदेश शहर स्तर पर मिशन के क्रियान्वयन के लिए तंत्र भी उपबंधित करता है ।

17. प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी की गई विवरणिका मार्च, 2016 के ऊपर वर्णित योजना दिशानिर्देशों, जिसको प्रत्यर्थी संख्या 1 और राज्य सरकार द्वारा अपने तारीख 21 मार्च, 2016 के आदेश के अंतर्गत जारी की गई है और साथ ही राज्य सरकार द्वारा यह विवरणिका प्रधानमंत्री आवास योजना - सभी के लिए आवास (शहरी) के अंतर्गत आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए मकान के ऑनलाईन रजिस्ट्रीकरण के लिए उपबंधित करती है । विरणिका के खंड 3 के अधीन उपबंधित अर्हता निम्नलिखित हैं :-

"3.0 पात्रता ।

3.0 आवेदक भारत का नागरिक हो तथा जिला गाजियाबाद का निवासी होना चाहिए ।

3.2 योजना में आवेदन करने की अंतिम तिथि तक आवेदक की आयु 18 वर्ष से कम नहीं होनी चाहिए ।

3.3 आवेदक के पास उसके नाम से अथवा उसके परिवार (उसके पति/पत्नी और अविवाहित बच्चे) के किसी सदस्य के नाम से भारत के किसी भी भाग में पक्का मकान (सभी मौसम रिहायशी ईकाई) नहीं होनी चाहिए ।

3.4 उपरोक्त पात्रता धारक प्रधानमंत्री आवास योजना (शहरी) के अंतर्गत आवेदन हेतु पात्र होंगे । राज्य शहरी विकास अधिकरण द्वारा पूर्व में चयनित आवेदकों के साथ-साथ नए आवेदकों को भी गाजियाबाद विकास प्राधिकरण से प्रधानमंत्री आवास योजना (शहरी) के अधीन भवनों हेतु आवेदन करना होगा । आवेदन के पश्चात्

उनकी पात्रता का सत्यापन राज्य शहरी विकास अधिकरण द्वारा किए जाने के उपरांत सत्यापित आवेदक ही आबंटन के पात्र होंगे ।

3.5 इस योजना के अंतर्गत निर्मित आवास परिवार की महिला मुखिया अथवा परिवार के पुरुष मुखिया और उसकी पत्नी के संयुक्त नाम में होगा और केवल उन मामलों में जहां परिवार का कोई वयस्क महिला सदस्य न हो, तो परिवार के पुरुष सदस्य के नाम से किया जा सकता है ।

3.6 दुर्बल आय वर्ग (ई.डब्ल्यू.एस.) श्रेणी के भवनों हेतु 3,000,00/- रुपए (रुपए तीन लाख मात्र) तक की वार्षिक आय वाले परिवार ही पात्र होंगे । आवेदक को राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत अधिकारी से निर्गत आय प्रमाणपत्र, जो योजना के प्रकाशन के समय वैध हो, प्रस्तुत करना अनिवार्य होगा ।"

18. यहां पर इस बात को अवेक्षित किया जाता है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा जारी किए गए 2016 के योजना दिशानिर्देशों अर्थात् विवरणिका में वे शर्तें समाविष्ट हैं, जिनके अंतर्गत लाभार्थियों को उस शहरी क्षेत्र का निवासी होना चाहिए, जिसके संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा योजना आरंभ की गई है और ये दिशानिर्देश यह भी उपबंधित करते हैं कि लाभार्थी परिवार को इस योजना के अंतर्गत लाभ प्राप्त करने के लिए अर्ह होने के प्रयोजनार्थ उसके नाम में या उसके परिवार के किसी सदस्य के नाम में इस योजना के अंतर्गत भारत के किसी भी भाग में पक्का मकान नहीं होना चाहिए ।

19. संविधान का अनुच्छेद 19(1)(ङ.), जो योजना दिशानिर्देशों और विवरणिका के अंतर्गत समाविष्ट शर्तों को चुनौती का एकमात्र आधार है, भारत के प्रत्येक नागरिक को भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने का अधिकार प्रत्याभूत करता है । अनुच्छेद 19(5) के निबंधनों के अनुसार अनुच्छेद 19(1)(ङ.) के अधीन प्रत्याभूत अधिकार युक्तयुक्त निर्बंधनों के अध्यधीन है, जो जनसामान्य के हितों को ध्यान में रखते हुए अधिरोपित किए जा सकते हैं ।

20. हम इस बात का उल्लेख करते हैं कि अनुच्छेद 19(1)(ङ.) के अधीन जो प्रत्याभूत किया गया है, वह भारत के राज्य क्षेत्र के किसी

भाग में निवास करने और बस जाने का अधिकार है, तथापि, अनुच्छेद 19(5) को दृष्टि में रखते हुए यह अधिकार राज्य को जनसामान्य के हितों को ध्यान में रखते हुए युक्तियुक्त निर्बंधन अधिरोपित करने से रोकता नहीं । कोई भी निर्बंधन, जो जनसामान्य के हित में है, हमारे विचार में अनुच्छेद 19(1)(ड.) के अधीन प्रत्याभूत अधिकारों के अतिक्रमण के कारण चुनौती का आधार नहीं होगा ।

21. योजना दिशानिर्देश और विवरणिका में समाविष्ट शर्तें स्पष्टत: दर्शित करते हैं कि वे शर्तें, जिनको याची द्वारा चुनौती दिया जाना ईप्सित है, योजना/मिशन के उद्देश्यों के अग्रसरण में है और जो अनिवार्यत: मलिन बस्तियों में रहने वालों के पुनर्वास, कमजोर वर्गों के लोगों के लिए वहन किए जाने योग्य आवास को प्रोन्नत किए जाने को सम्मिलित करते हुए शहरी क्षेत्रों के गरीबों की आवास आवश्यकताओं को संबोधित करते हैं । योजना के अधीन लाभार्थी परिवार को अर्ह होने के लिए उसके स्वामित्वाधीन भारत के किसी भाग में कोई पक्का मकान नहीं होना चाहिए, जिससे स्पष्टत: योजना का उद्देश्य और दृष्टिकोण दर्शित होता है और जो शहरी क्षेत्रों में रहने वाले गरीबों के लिए आवास उपलब्ध कराए जाने के प्रयोजनार्थ है ।

22. इस योजना का कार्यान्वयन जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए 2011 की शहरी क्षेत्रों में क्षेत्रवार किया जाना है और बाद में अधिसूचित कस्बे भी इस योजना में सम्मिलित होने के लिए अर्ह होंगे । इस योजना के अधीन कार्यान्वयन प्रक्रिया लाभार्थियों की पहचान और शहर, राज्य और केंद्रीय सरकार के स्तर पर योजना के निरीक्षण के लिए उपबंधित करती है । योजना का कार्यान्वयन योजना दिशानिर्देशों के अंतर्गत लाभार्थियों की पहचान के आधार पर राज्य सरकार द्वारा जारी तारीख 21 मार्च, 2016 के आदेश के अंतर्गत प्रत्येक शहरी ईकाई के लिए तैयार की गई विस्तृत परियोजना रिपोर्ट के आधार पर किया जाना है ।

23. राज्य सरकार द्वारा जारी तारीख 21 मार्च, 2020 के आदेश और साथ ही विवरणिका के आधार पर योजना दिशानिर्देशों से यह पूर्णत: स्पष्ट हो जाता है कि योजना को शहरी क्षेत्रों के गरीबों की आवासीय आवश्यकताओं को संबोधित किए जाने के उद्देश्य से लागू किया जा रहा है और लाभार्थियों की पहचान के संबंध में योजना के अधीन शर्तें इस

अपेक्षा के अंतर्गत हैं कि लाभार्थियों को शहर का निवासी होना चाहिए, जिसके लिए इस योजना को बृहत्तर जनहित में योजना के प्रभावी कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ कार्यान्वित किया जा रहा है । अत: हमारा यह विचार है कि दिशानिर्देशों और साथ ही विवरणिका के अंतर्गत शर्तों को ध्यान में रखते हुए यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि वे ऐसे निर्बंधन अधिरोपित करने वाली हैं, जिनको अयुक्तियुक्त कहा जा सके या वे किसी भी प्रकार से याची को अनुच्छेद 19(1)(ड.) के अधीन भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने के अधिकार के अतिक्रमण का प्रभाव रखते हों ।

24. याची द्वारा **अहमदाबाद म्युनिसिपल कारपोरेशन** बनाम **नवाब खान गुलाब खान और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय, जिसका अवलंब याची द्वारा लिया गया, जो फुटपाथों पर निवास करने वालों को निष्कासित किए जाने से संबंधित है और यह निर्णय इन तथ्यों के संदर्भ में पारित किया गया था कि इस निर्णय में कतिपय मताभिव्यक्तियां आश्रय के अधिकार के संबंध में की गई थीं, जो अनुच्छेद 21 और 19(1)(ड.) के अधीन मूल अधिकार के भाग होने के संबंध में की गई थीं और यह अभिनिर्धारित करते हुए कि किसी भी व्यक्ति को लोक प्रयोजन के लिए आरक्षित या चिह्नित स्थानों पर अतिक्रमण का अधिकार नहीं है, यह अभिकथित किया गया कि राज्य का यह संवैधानिक कर्तव्य है कि वह लोगों के आश्रय के लिए पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध कराएं और अनुच्छेद 21 के अधीन जीवन के अधिकार के लिए आश्रय के निर्माण को अर्थपूर्ण प्रभावी और फलदायी बनाएं ।

25. वर्तमान मामले के तथ्य पूर्णतया विभेदनीय हैं, चूंकि याची का दावा प्रत्यर्थी संख्या 3 की आवास योजना के अंतर्गत आर्थिक रूप से दुर्बल वर्ग के लोगों के लिए मकान के आबंटन के विचारण तक सीमित है और याची का यह पक्षकथन नहीं है कि आश्रय, जीवन या जीवकोपार्जन का अधिकार छीना जा रहा है और तद्नुसार याची को **अहमदाबाद म्युनिसिपल कारपोरेशन** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए विनिश्च में अधिकथित विनिश्चयानुपात से कोई लाभ प्राप्त नहीं हो सकता ।

26. इस तथ्य का भी संज्ञान लिया जाता है कि पर्याप्त आवास के अधिकार को आधारी मानवाधिकार के रूप में मान्यता प्रदान की गई है ।

ओल्गा टैलीज और अन्य बनाम **बाम्बे म्युनिसिपल कारपोरेशन और अन्य**[1] वाले मामले में फुटपाथ पर निवास करने वालों की तरफ से फाइल की गई याचिका पर निर्णय देते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अनुच्छेद 21 के अधीन प्रत्याभूत जीवन के अधिकार में जीविकोपार्जन और आश्रय का अधिकार भी सम्मिलित है ।

27. पुनः, **मैसर्स शांति स्टार बिल्डर्स** बनाम **नारायण खिमाला टोटामी और अन्य**[2] वाले मामले, जो समाज के दुर्बल वर्गों के लिए रिहायशी ईकाइयों के निर्माण से संबंधित मामला था, में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जीवन के अधिकार की परिधि के भीतर भोजन, वस्त्र, शालीन वातावरण और निवास के लिए उपयुक्त आवास के अधिकार सम्मिलित हैं । इस संबंध में इस निर्णय में की गई मताभिव्यक्तियां निम्नलिखित हैं :-

> "9. मनुष्य की आधारी आवश्यकताओं को परम्परागत रूप से भोजन, वस्त्र और आश्रय, तीन आवश्यकताओं के रूप में स्वीकार किया गया है । जीवन का अधिकार, वस्त्र का अधिकार, शालीन वातावरण और आश्रय के लिए युक्तिसंगत आवास के अधिकार किसी भी सभ्य समाज में प्रत्याभूत अधिकार होते हैं । आश्रय के प्रयोजनार्थ किसी पशु और मानव की आवश्यकताओं के मध्य अंतर को ध्यान में रखा जाना चाहिए । जहां तक पशु का संबंध है, आश्रय का अधिकार मात्र शरीर के संरक्षण तक सीमित है, किंतु जहां तक मानव का संबंध है, वह उपयुक्त आवास होना चाहिए, जो उसको शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक, प्रत्येक पहलू के संबंध में आगे बढ़ने का अवसर प्रदान करता है । संविधान प्रत्येक बच्चे का अधिकतम विकास सुनिश्चित किए जाने का उद्देश्य रखता है । वह तभी संभव होगा, यदि वह बच्चा समुचित घर में निवास करता है । यह संभव नहीं है कि प्रत्येक नागरिक की रिहायश सुसज्जित और सुविधाजनक मकान में हो, किंतु समुचित मकान, विशेष रूप से भारत के लोगों के लिए, मिट्टी से निर्मित छप्पर की छत वाला मकान या मिट्टी से बना हुआ अग्निरोधी मकान भी हो सकता है ।"

---

[1] ए. आई. आर. 1986 एस. सी. 180 = 1985 एस. सी. आर. सप्ली. (2) 51.

[2] (1980)1 एस. सी. 520.

28. **पी. जी. गुप्ता** बनाम **गुजरात राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में समान विचार व्यक्त करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि लोगों को गरिमा के साथ समान हैसियत में जीवन यापन करने और उसके जीवन को अर्थपूर्ण बनाने के लिए समाज के दुर्बल वर्गों को प्रदान की गई सुविधाओं और अवसरों को सम्मिलित करते हुए निवास और बंदोबस्त का अधिकार को अनुच्छेद 38, 39, 46 और 19(1)(ड.) में प्रतिष्ठापित है । इस मामले में राज्य के लिए यह आवश्यक अभिनिर्धारित किया गया कि वह आवास योजनाएं उपबंधित किए जाने के द्वारा गरीबों को आवास स्थान उपलब्ध कराए, जहां दुर्बल वर्ग के लोगों का स्थाई बंदोबस्त हो सके और उनको संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ड.) और 21 के अधीन निवास सुनिश्चित किया जा सके । इस निर्णय में जो मताभिव्यक्ति की गई, वे निम्नलिखित हैं :-

> "7. ... अनुच्छेद 19(1)(ड.) भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में निवास और बंदोबस्त के अधिकार को संरक्षण प्रदान करता है । अनुच्छेद 21 के अधीन प्रत्याभूत जीवन के संरक्षण को जीवन के अधिकार के अर्थान्तर्गत विस्तार प्रदान किया गया है । यह सुस्थापित विधि है कि संविधान के अंतर्गत समस्त संबंधित उपबंधों को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए और विविध अधिकारों को आच्छादित करते हुए व्यापकतम आयाम के अर्थ प्रदान किए जाने चाहिए, जो जीवन के अधिकार को अर्थपूर्ण बनाते हों । हमारे संविधान की प्रस्तावना में कहा गया है कि भारत के लोगों ने अपने समस्त नागरिकों को सामाजिक और आर्थिक न्याय सुनिश्चित करने का संकल्प लिया है और उसको अखंड और एकीकृत भारत में व्यक्ति की गरिमा को बढ़ाने के लिए प्रतिष्ठा और अवसर की समता के अध्यधीन कर दिया है । संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 37 देश के शासन में अधिकारों या मूल विधि की घोषणा करता है । अनुच्छेद 39(ख) की यह आज्ञा है कि किसी समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण लोगों के दुर्बल वर्गों

[1] (1995) (सप्ली.) 2 एस. सी. सी. 182 = जे. टी. 1995 (2) एस. सी. 373.

को सामाजिक और आर्थिक न्याय सुनिश्चित किए जाने के द्वारा लोगों का कल्याण प्रोन्नत करना होता है, ताकि आय में असमानताओं को न्यूनतम किए जाने के द्वारा जनसामान्य के कल्याण की पूर्ति की जा सके और हैसियत में असमानताओं को समाप्त किए जाने के प्रयास किए जा सके । तद्द्वारा, राज्य में लोगों और लोगों के समूहों, जिनका अपना स्वयं का कोई मकान नहीं है, को सुविधाएं और अवसर उपलब्ध कराए जाने के प्रयोजनार्थ योजनाओं को अंतर्वलित किया गया है । विशेष रूप से अनुच्छेद 46 की यह आज्ञा है कि राज्य दुर्बल वर्गों के लोगों के आर्थिक हितों को विशेष सावधानी के साथ प्रोन्नत करेगा और उनकी सामाजिक अन्याय से रक्षा करेगा ।

8. आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय प्रसंविदा के अनुच्छेद 11(1) में अधिकथित किया गया है कि वे राष्ट्र, जो इस प्रसंविदा के पक्षकार हैं, 'भोजन, वस्त्र और आवास को सम्मिलित करते हुए प्रत्येक व्यक्ति और उसके परिवार के लिए पर्याप्त जीवन स्तर और जीवन की परिस्थिति में निरंतर सुधार के प्रत्येक अधिकार' को मान्यता प्रदान करते हैं । पक्षकार राष्ट्र इन अधिकारों को उपलब्ध कराए जाने को सुनिश्चित करने के लिए समुचित कदम उठाएंगे । राज्य की इन बाध्यताओं को मान्यता प्रदान करते हुए और अंतरराष्ट्रीय सहयोग के आवश्यक महत्व को मान्यता प्रदान करते हुए और अनुच्छेद 38, 39 और 46 में समाविष्ट निर्देशों को प्रभावी किए जाने के लिए निम्न आय वर्ग के लोगों को आबंटन के लिए आवास योजना बनाई गई थी । वास्तविक संपत्ति का कब्जा समाज में वैभव और प्रभाव का आधार और प्रतीक होता है । गरीबों के लिए अनुच्छेद 19(1)(ड.) द्वारा किसी निर्धारित स्थान पर बंदोबस्त और आवास का अधिकार प्रत्याभूत किया गया है, जो कि अत्यधिक उलझन बढ़ाने वाला अधिकार है जब तक कि राज्य उनको भोजन, वस्त्र और आश्रय के साधन उपलब्ध न करा दे जिससे कि उनका जीवन अर्थपूर्ण और गरिमा के साथ निर्वाह योग्य हो सके ।

*** *** ***

11. जैसाकि पहले अभिकथित किया गया है, निवास और बंदोबस्त का अधिकार अनुच्छेद 19(1)(ड.) के अधीन मूल अधिकार है और यह अधिकार अनुच्छेद 21 के अधीन जीवन के अर्थपूर्ण अधिकार से अपृथक्नीय । भोजन, आश्रय और वस्त्र न्यूनतम मानव अधिकार है । राज्य ने अपनी आर्थिक नीति के रूप में देश के योजनाबद्ध विकास का विकल्प चुना है और इसके लिए बड़े स्तर पर आवास योजनाएं चालू की गईं हैं । इसी प्रयास के भाग के रूप में मकानों का आबंटन आरंभ किया गया था, जैसेकि अनुच्छेद 38, 39 और 46 । संविधान की प्रस्तावना और अनुच्छेद 19(1)(ड.) की आज्ञा है, निवास का अधिकार समाज के दुर्बल वर्गों को सुविधाएं और अवसर प्रदान करते हैं और व्यक्ति के जीवन को गरिमा के साथ समान हैसियत में अर्थपूर्ण और निवास योग्य बनाते हैं । अतः यह आवश्यक है कि राज्य स्वयं के द्वारा अथवा उसके अभिकरणों द्वारा उनके आर्थिक संसाधनों के भीतर आरंभ की गई आवास योजनाओं में गरीबों को आवासीय स्थान उपलब्ध कराएं, ताकि वे आसान किश्तों में उसके मूल्य का संदाय कर सकें और अनुच्छेद 19(1)(ड.) और अनुच्छेद 21 के अधीन आश्वस्त किए गए स्थाई बंदोबस्त और निवास प्राप्त कर सकें । ...."

29. **चमेली सिंह और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में अनुच्छेद 21 और 19(1)(ड.) के अधीन जीवन के अधिकार के संघटकों पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि मनुष्य के रूप में जीवन के अधिकार में भोजन, जल, शालीन वातावरण, शिक्षा, चिकित्सीय देखभाल और आश्रय के अधिकार सम्मिलित हैं और राज्य की नीति के निदेशक तत्वों को निर्दिष्ट करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि राज्य के संबंध में यह प्रतीत किया जाएगा कि वह समाज के दुर्बल वर्गों को आवास सुविधाएं उपलब्ध कराने की बाध्यता के अधीन है ताकि उनको राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा में

---

[1] (1996) 2 एस. सी. सी. 549 = ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 1051.

सम्मिलित किया जा सके और उनको वे सुविधाएं और अवसर उपलब्ध कराए जा सकें हो इतने आधारी हों कि उनके आधारी मानवीय और संवैधानिक अधिकारों के अनुसार हों । इस मामले में यह अभिकथित किया गया :–

> "8. किसी भी संगठित समाज में मनुष्य के रूप में जीवन का अधिकार मात्र पशुओं की आवश्यकताओं के आधार पर सुनिश्चित नहीं किया जा सकता । यह तभी सुनिश्चित किया जा सकता है यदि उसको स्वयं का विकास करने की समस्त सुविधाएं सुनिश्चित की जाएं और उसको उन निर्बंधनों से निर्मुक्त किया जाए, जो उसके विकास में बाधा उत्पन्न करते हों । सभी मानवीय अधिकार इस उद्देश्य को अभिप्राप्त किए जाने के प्रयोजनार्थ परिकल्पित हैं । किसी भी सभ्य समाज में प्रत्याभूत जीवन के अधिकार का अर्थ भोजन, जल, शालीन वातावरण, शिक्षा, चिकित्सीय देखभाल और आश्रय से है । यह किसी भी सभ्य समाज में ज्ञात आधारी मानवीय अधिकार है । मानवाधिकारों की वैश्विक घोषणा और प्रसंविदा या भारत के संविधान में प्रतिष्ठापित समस्त सिविल, राजनैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों का प्रयोग इन आधारी मानवीय अधिकारों के प्रयोग के बिना संभव नहीं है । अतः, किसी भी मनुष्य के लिए आश्रय मात्र उसके जीवन और अंगों का संरक्षण नहीं है । यह उसका घर ही है, जहां उसको शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक रूप से विकास का अवसर प्राप्त होता है । अतः, आश्रय के अधिकार में निवास योग्य पर्याप्त स्थान, सुरक्षित और शालीन संरचना, स्वच्छ और शालीन पास-पड़ोस, पर्याप्त प्रकाश, शुद्ध वायु और जल, बिजली, स्वच्छता और अन्य नागरिक सुविधाएं जैसेकि सड़क इत्यादि, जिससे कि वह अपने नित्य कार्य पर सुगमतापूर्वक पहुंच सके, सम्मिलित होते हैं । अतः, आश्रय के अधिकार का अर्थ मात्र किसी के सर पर छत के अधिकार से नहीं है बल्कि उस समस्त अवसंरचना के अधिकार से है, जो उसको जीवित रहने और मानव के रूप में विकसित होने के समर्थ बनाते हैं । जब आश्रय के अधिकार का प्रयोग जीवन के

अधिकार की अनिवार्य अपेक्षा के रूप में प्रयोग किया जाता है, तो उसके बारे में यह उपधारणा की जानी चाहिए कि वह मूल अधिकार के रूप में प्रत्याभूत है । जैसाकि संविधान के नीति-निर्देशक तत्वों में स्पष्ट किया गया है, राज्य के बाबत यह उपधारणा की जानी चाहिए कि वह अपने नागरिकों के लिए, निश्चित रूप से आर्थिक बजट के अध्यधीन रहते हुए, इसे सुनिश्चित करने की बाध्यता के अधीन है । प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी लोकतांत्रिक समाज में संगठित सामाजिक समुदाय के सदस्य के रूप में स्थाई आश्रय उपलब्ध होना चाहिए, ताकि उसका शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक रूप से विकास हो और वह एक लाभकारी नागरिक के रूप में अपनी उत्कृष्टता में संवर्धन कर सके, जैसाकि मूल कर्तव्यों में सम्मिलित किया गया है और वह लोकतंत्र में लाभदायक नागरिक और समान रूप से सहभागी हो । किसी व्यक्ति को गरिमा के अधिकार के साथ सुसज्जित व्यक्ति बनाए जाने और अवसरों की समानता उपलब्ध कराए जाने का अंतिम उद्देश्य उसको एक सुसंस्कृत व्यक्ति के रूप में विकसित करना होता है । इसलिए शालीन निवास की आवश्यकता समानता, आर्थिक न्याय, निवास के मूल अधिकार, व्यक्ति की गरिमा और उसके स्वयं के जीवन के अधिकार के संवैधानिक पहलू के आत्यंतिक उद्देश्य को सफल बनाते हैं । दलीतों और आदिवासियों को राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा में सम्मिलित किए जाने के प्रयोजनार्थ उनको इन सुविधाओं और अवसरों को उपलब्ध कराना, जो उनके आधारी मानवीय और संवैधानिक अधिकारों के अनुरुप हैं, राज्य का कर्तव्य है ।"

30. अतः, यह देखा गया है कि आवास और आश्रय के अधिकार को अनुच्छेद 21 और 19(1)(ड.) के अधीन प्रत्याभूत मूल अधिकारों के भाग के रूप में अनेक न्यायिक विनिश्चयों की श्रृंखला में सम्मिलित किया गया है ।

31. हमारे समक्ष उपस्थित मामले में प्रश्नगत योजना और सभी के लिए आवास (शहरी) मलिन बस्ती के निवासियों के पुनर्वास और दुर्बल वर्गों के लिए वहन किए जाने योग्य मकानों को प्रोन्नत किए जाने के

लिए उपबंधित करने के द्वारा शहरी क्षेत्रों के गरीबों की आवास संबंधी आवश्यकताओं को संबोधित करने के लिए ईप्सित हैं । अत:, इस योजना के उद्देश्य और दिशानिर्देश स्पष्टत: सभी के लिए आवास सुविधाएं सृजित करने के उद्देश्य को संबोधित किए जाने को दृष्टि में रखते हुए, विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों के गरीबों और मलिन बस्तियों में रहने वालों को सम्मिलित करते हुए और शहरी क्षेत्रों में उनकी पहचान के लिए उपबंधित किए जाने के द्वारा किसी भी प्रकार से जनहित के विपरीत नहीं कहे जा सकते, जिस आधार पर उनको याची को प्रत्याभूत मूल अधिकारों में से किसी भी अधिकार का उल्लंघन करने वाला जैसाकि उसके द्वारा कहा गया है, कहा जा सके ।

32. याची के काउंसेल हमको यह स्पष्ट करने में समर्थ नहीं हो सके कि दिशानिर्देशों और विवरणिका के अंतर्गत समाविष्ट शर्तें किस प्रकार से उसके निवास करने और देश के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में बस जाने के अधिकार में किसी भी प्रकार से कटौती करते हैं, जैसाकि अनुच्छेद 19(1)(ड.) के अधीन प्रत्याभूत है या पूर्वोक्त शर्तों पर जनसामान्य के हित में न होने के आधार पर आक्रमण किया जा सकता है ।

33. पूर्वोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, हम वर्तमान मामले में संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी वैवेकिक अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए आनत नहीं हैं ।

34. तद्नुसार यह रिट याचिका खारिज की जाती है ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

शु.

नीलम देवी (श्रीमती)

बनाम

विकास सिंह

(2017 की प्रथम अपील संख्या 305)

तारीख 15 अक्तूबर, 2020

न्यायमूर्ति शशिकांत गुप्ता और न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित

कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 (1984 का 66) – धारा 19 – अपील – अधीनस्थ न्यायालय द्वारा इस तथ्य पर विचार करने में विफल रहना कि वादी-प्रत्यर्थी और उसके परिवार के सदस्य दहेज के लिए प्रतिवादी-अपीलार्थी का उत्पीड़न कर रहे थे, जिस कारणवश पत्नी द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई और साक्ष्य के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि पत्नी सदैव पति के साथ निवास की इच्छुक थी और वर्तमान में भी इच्छुक है और पति द्वारा उसकी उपेक्षा और परित्याग किया गया – पत्नी के परिवार के सदस्यों द्वारा लड़ाई-झगड़े के संबंध में किए गए अभिकथनों और दोनों पक्षों द्वारा एक दूसरे के विरुद्ध लगाए गए व्यभिचार के आरोपों पर कुटुम्ब न्यायालय द्वारा अविश्वास किया जाना, फिर भी अभिलेख पर बिना किसी तर्कपूर्ण साक्ष्य के विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित किया जाना – विद्वान् कुटुंब न्यायालय द्वारा इस आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान किया जाना कि पत्नी ने पति का परित्याग कर दिया था और अपने माता-पिता के घर में रहने लगी थी, किंतु वह पति द्वारा दहेज के कारण उत्पीड़न किए जाने और पत्नी द्वारा पति के साथ जीवन-यापन की इच्छा के संबंध में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विचार करने में असफल रहे – विवाह-विच्छेद की डिक्री अपास्त किए जाने योग्य है ।

कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 – धारा 19 – अपील – अपीलार्थी-पत्नी अपनी स्वतंत्र इच्छा के कारण पृथक् रूप से जीवन यापन नहीं कर रही बल्कि वह अपने पति के साथ जीवन यापन के लिए

सदैव तत्पर थी और वर्तमान में भी है – पति/वादी-प्रत्यर्थी इस तथ्य को साबित कर पाने में विफल रहा कि प्रतिवादी-अपीलार्थी ने उसके साथ क्रूरता कारित की या बिना किसी पर्याप्त कारण के उसका परित्याग किया – अपील मंजूर किए जाने योग्य है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि यह प्रथम अपील प्रतिवादी-अपीलार्थी द्वारा 1955 के हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 के अधीन फाइल किए गए 2011 के वाद संख्या 487 में हापुड़ के कुटुंब न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश द्वारा तारीख 25 मार्च, 2017 को पारित निर्णय ओर डिक्री के विरुद्ध 1984 के कुटुंब न्यायालय अधिनियम की धारा 19 के अधीन फाइल की गई है, जिसके द्वारा वादी-प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए विवाह-विच्छेद के वाद के डिक्री कर दिया गया । प्रत्यर्थी पति द्वारा फाइल की गई विवाह-विच्छेद याचिका इन अभिकथनों पर आधारित थी कि उसका विवाह प्रतिवादी-अपीलार्थी के साथ तारीख 20 जून, 2002 को हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार संपन्न हुआ था । विवाह के पश्चात् वादी-प्रत्यर्थी प्रतिवादी-अपीलार्थी को अपने घर ले आया । उसने पति होने के नाते अपनी समस्त बाध्यताओं का निर्वहन किया और सुखी वैवाहिक जीवन व्यतीत करने लगा और उसने अपनी हैसियत के अनुसार अपनी पत्नी की सभी सद्भावी आवश्यकताओं की पूर्ति भी की । उनकी पुत्री जिसका नाम कुमारी लावी है, का जन्म तारीख 1 जनवरी, 2004 को हुआ । उसके द्वारा यह अभिकथन किया गया कि विवाह के दो वर्षों के पश्चात् दोनों पक्षों के मध्य संबंध तनावपूर्ण हो गए और प्रतिवादी ने उससे अपने परिवार से पृथक् होकर रहने के लिए कहने के द्वारा परेशानियां सृजित करना आरंभ कर दिया । उसने आगे यह अभिकथन किया कि प्रतिवादी पत्नी घरेलू कार्य करने के लिए तैयार नहीं थी और उसने वादी-पति से लड़ाई-झगड़ा आरंभ कर दिया था । उसने आगे अभिकथित किया कि पत्नी वादी की अनुज्ञा बिना बारंबार अपने पिता के घर चली जाती थी । इसके अलावा वह किसी अज्ञात व्यक्ति से टेलीफोन पर नियमित रूप से बातचीत करती रहती थी और इस बाबत पूछे जाने पर लड़ाई-झगड़ा करती थी । उसने आगे अभिकथन किया कि तारीख 27 मार्च, 2010 को, जब वादी अपने घर से बाहर गया हुआ था,

तब प्रतिवादी किसी अज्ञात व्यक्ति से टेलीफोन पर बातचीत कर रही थी और जब वादी ने घर पहुंचने पर इस बाबत पूछताछ की कि वह किसके साथ बातचीत कर रही थी, तो प्रतिवादी ने क्रोधित होते हुए उसकी हत्या कराने की धमकी दी । प्रतिवादी के पिता और भाई उसी दिन उसके घर आए और प्रतिवादी और उसकी बेटी कुमारी लावी को अपने साथ ले गए और जाते समय 60,000/- रुपए नगद और बीस तोला सोना भी वादी के घर से अपने साथ ले गए । वादी-अपीलार्थी ने आगे निवेदन किया है कि पत्नी अपनी वैवाहिक बाध्यताओं का निर्वहन विगत छह वर्षों से नहीं कर रही थी । उसने आगे अभिकथन किया कि पत्नी ने उसके विरुद्ध एक झूठा मामला दर्ज करा दिया था, जो मेरठ के महिला थाना में 2010 के मामला अपराध संख्या 23 के रूप में रजिस्ट्रीकृत हुआ था, जिसको बाद में सम्मानित लोंगों और नातेदारों के मध्यक्षेप के कारण वापस ले लिया गया था और दोनों पक्ष आपसी सहमति के आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए सहमत हो गए थे । विवाह-विच्छेद याचिका 1955 के अधिनियम की धारा 13-ख के अधीन तारीख 9 अप्रैल, 2010 को फाइल की गई थी, जिसको 2010 के वाद संख्या 176 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था, किंतु बाद में इस विवाह-विच्छेद याचिका को तारीख 16 अगस्त, 2011 को प्रतिवादी-अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए आवेदन के आधार पर वापस ले लिया गया था । जब प्रतिवादी-अपीलार्थी ने वादी-प्रत्यर्थी के साथ रहने से इनकार किया, तो विवशकारी परिस्थितियों के अंतर्गत वर्तमान विवाह-विच्छेद याचिका क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद की ईप्सा करते हुए फाइल की गई । प्रतिवादी-अपीलार्थी ने विवाह-विच्छेद याचिका की सूचना प्राप्त होने पर उसका प्रतिवाद लिखित कथन फाइल किए जाने के द्वारा किया और उसने विवाह-विच्छेद याचिका में समाविष्ट अभिकथनों से इनकार किया । प्रतिवादी-अपीलार्थी द्वारा यह अभिकथन किया गया कि उसके पिता ने विवाह के संबंध में पंद्रह लाख रुपए खर्च किए थे और उन्होंने विवाह के समय समस्त गृहोपयोगी वस्तुएं भी प्रदान की थीं, किंतु उसके पति का परिवार दहेज की मांग को लेकर प्रसन्न नहीं था और उन्होंने एक कार और दो लाख रुपए नकद की अतिरिक्त मांग की थी । दहेज की इस अवैध मांग को उसके पिता

द्‌वारा पूर्ण नहीं किया जा सका और इसी कारणवश उसके पति के परिवार के सदस्यों ने अपीलार्थी-प्रतिवादी के साथ गाली-गलौज करना और उसका उत्पीड़न करना आरंभ कर दिया । उसने आगे अभिकथन किया कि उसके पति के मोहल्ले की एक विवाहित महिला के साथ अवैध संबंध थे और वह जीवन व्यतीत कर रहा था । जब दहेज की अवैध मांग को पूरा नहीं किया गया, तो उसको उसके पति और पति के परिवार के सदस्यों द्‌वारा मारा पीटा गया और उसको उसकी पुत्री कुमारी लावी के साथ उसके वैवाहिक घर से तारीख 27 मार्च, 2010 को निकाल दिया गया । उसने महिला थाना में एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई, जिसको भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क और 323 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन 2010 के मामला अपराध संख्या 23 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । तत्पश्चात् वादी- पति के बहनोई (जीजा) के हापुड़ स्थित निवास में तारीख 4 अप्रैल, 2010 को एक बैठक का आयोजन प्रतिवादी की अनुपस्थिति में किया गया और जिसमें वादी पति ने प्रतिवादी को अपनी पत्नी के रूप में साथ रखने से इनकार कर दिया । उसने विवाह-विच्छेद की इच्छा व्यक्त की और प्रतिवादी को स्थाई रूप से निर्वाह भत्ता के रूप में आठ लाख रुपए और कुमारी लावी के भरण-पोषण के लिए बारह लाख रुपए का संदाय करने के लिए तैयार हो गया । उसने प्रतिवादी पत्नी के पिता और उसके परिवार के अन्य सदस्यों द्‌वारा दबाव डाले जाने पर आपराधिक मामले को वापस ले लिया । तत्पश्चात् तारीख 9 अप्रैल, 2010 को 1955 के अधिनियम की धारा 13-ख के अधीन विवाह-विच्छेद याचिका फाइल की गई, जिसको 2010 के विवाह-विच्छेद मामला संख्या 176 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया, किंतु आपसी सहमति के साथ पूर्ववर्ती विवाह-विच्छेद याचिका फाइल किए जाने के पश्चात् भी वादी-प्रत्यर्थी ने प्रतिवादी-अपीलार्थी को न तो सहमत रकम का संदाय किया और न ही उस रकम को कुमारी लावी के नाम में जमा किया और तत्पश्चात् आपसी सहमति के साथ विवाह-विच्छेद के लिए फाइल की गई पूर्ववर्ती याचिका को बाद में तारीख 16 अगस्त, 2011 को उसके द्‌वारा फाइल किए आवेदन के आधार पर वापस ले लिया गया । उसके द्‌वारा यह

अभिवाक् भी किया गया कि उसने वादी-प्रत्यर्थी का परित्याग कभी नहीं किया, बल्कि वादी-प्रत्यर्थी ने ही इतनी लंबी अवधि के लिए बिना किसी पर्याप्त कारणवश उसका परित्याग किया और अब वह उसको अपनी पत्नी के रूप में अपने साथ रखने के लिए तैयार नहीं है । वादपत्र में क्रूरता के संबंध में अभिकथनों से विनिर्दिष्ट रूप से इनकार किया गया और यह अभिकथन किया गया कि पत्नी सदैव वादी-प्रत्यर्थी के साथ रहने के लिए तैयार थी और अभी भी तैयार है और प्रार्थना की गई कि वादी-प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए विवाह-विच्छेद वाद को खारिज किया जाए । विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने तारीख 25 मार्च, 2017 के निर्णय और आदेश द्वारा विवाह-विच्छेद याचिका को मंजूर कर लिया, जिसको वर्तमान अपील में आक्षेपित किया गया है । याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – हमारे समक्ष उपस्थित मामले में पति स्वयं याची साक्षी-1 के रूप में उपस्थित हुआ था और उसने वही वृत्तांत प्रस्तुत किया था, जैसाकि विवाह-विच्छेद याचिका में अभिकथित किया गया था, किंतु उसने अपने पक्षकथन के समर्थन में कोई अन्य साक्षी या साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था । स्वमेव कुटुंब न्यायालय ने इस निष्कर्ष को अभिलिखित किया है कि पति ने पत्नी और उसके परिवार के सदस्यों के विरुद्ध वर्ष 2010 में उसके और उसकी माता के साथ वाद-विवाद के संबंध में कोई शिकायत दर्ज नहीं कराई थी । इसके अतिरिक्त विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने इस बाबत भी अपने निष्कर्ष अभिलिखित किए हैं कि वादी-पति इस बात को साबित कर पाने में विफल रहा है कि पत्नी किसी अज्ञात व्यक्ति के साथ टेलीफोन पर बात करती रहती थी । विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने, जहां तक क्रूरता का संबंध है, कुसुम लता **बनाम** कांता प्रसाद, नारायण गणेश दस्ताने **बनाम** श्रीमती सुचेतानारायण दस्ताने, मंजीत कौर **बनाम** अवतार और हनुमंत राव **बनाम** शमानी वाले मामलों में दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया था, किंतु ऐसे किसी भी साक्ष्य पर विचार करने में विफल रहा, जो अपीलार्थी के विरुद्ध किए गए क्रूरता के अभिकथनों को साबित कर सके । विद्वान् कुटुंब न्यायालय द्वारा विवाह-विच्छेद याचिका इस आधार पर डिक्री कर दी गई थी कि पत्नी का व्यवहार एक आदर्श स्त्री का नहीं था, वह अपने माता-पिता के घर

पर रहा करती थी, उसके परिवार के सदस्यों से लड़ाई-झगड़ा करती थी और साथ ही पति के विरुद्ध असत्य आरोप लगाया करती थी, जो पत्नी द्‌वारा क्रूरता माना जाएगा । हमने कुटुंब न्यायालय द्‌वारा दिए गए निर्णय का परिशीलन किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि विद्‌वान् निचला न्यायालय इस बात पर विचार करने में विफल रहा कि प्रतिवादी-अपीलार्थी का प्रपीड़न वादी-प्रत्यर्थी और उसके परिवार के सदस्यों द्‌वारा दहेज के लिए किया जा रहा था जिसके अनुसरण में पत्नी द्‌वारा एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी और साक्ष्य के परिशीलन से यह स्पष्ट होता है कि पत्नी सदैव पति के साथ निवास के लिए इच्छुक थी और वर्तमान में भी है और उसकी उसके पति द्‌वारा उपेक्षा की गई थी और उसका परित्याग कर दिया गया था । यह सुस्थापित विधि है कि कोई भी पक्ष अपने स्वयं के द्‌वारा किए गए दोषपूर्ण कार्यों का लाभ नहीं ले सकता । पत्नी के परिवार के सदस्यों द्‌वारा लड़ाई-झगड़े के संबंध में किए गए अभिकथनों पर कुटुंब न्यायालय द्‌वारा निर्णय के पैरा 9 में पहले ही अविश्वास किया जा चुका है और इसके अतिरिक्त दोनों पक्षों द्‌वारा एक दूसरे के विरुद्ध लगाए गए व्यभिचार के आरोपों पर निचले न्यायालय द्‌वारा अविश्वास किया गया, किंतु फिर भी अभिलेख पर बिना किसी तर्कपूर्ण साक्ष्य के विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित कर दी गई । विद्‌वान् कुटुंब न्यायालय ने इस आधार पर भी विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान की कि पत्नी ने पति का परित्याग कर दिया था और अपने माता-पिता के घर निवास करने लगी थी, किंतु वे पत्नी द्‌वारा दहेज के कारण प्रपीड़न किए जाने और अपने पति के साथ जीवन यापन की उसकी इच्छा के संबंध में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विचार करने में असफल रहे । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि अपीलाथी-पत्नी अपनी स्वयं की स्वतंत्र इच्छा के कारण पृथक् रूप से जीवन यापन नहीं कर रही है । प्रतिवादी-अपीलार्थी वादी-प्रत्यर्थी के साथ जीवन यापन के लिए तत्पर थी और वर्तमान में भी है । प्रतिवादी-अपीलार्थी ने स्वमेव ही वादी-प्रत्यर्थी का परित्याग नहीं किया । वादी-प्रत्यर्थी इस बात को साबित कर पाने में विफल रहा है कि प्रतिवादी-अपीलार्थी ने उसके साथ क्रूरता कारित की थी या बिना किसी

पर्याप्त कारण के उसका परित्याग कर दिया था । पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए यह अपील मंजूर किए जाने योग्य है । तद्नुसार, अपील मंजूर की जाती है और हापुड़ के कुटुंब न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश द्वारा तारीख 25 मार्च, 2017 को पारित निर्णय और डिक्री को अपास्त किया जाता है और वादी द्वारा फाइल किए गए विवाह-विच्छेद वाद को खारिज किया जाता है । (पैरा 15, 16, 17, 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2018]	2018 (3) ए. डब्ल्यू. सी. 2328 : **श्रीमती सरिता देवी** बनाम **अशोक कुमार सिंह** ;	14
[2011]	ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1637 : **हितेश भटनागर** बनाम **दीपा भटनागर** ;	11
[2002]	ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 591 : **सावित्री पांडे** बनाम **प्रेमचंद्र पांडेय** ;	9
[2001]	2001 हिंदू ला. रिपोर्ट 614 : **मंजीत कौर** बनाम **अवतार सिंह** ;	12
[1999]	ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 1318 : **हनुमंत राव** बनाम **शमानी** ;	15
[1975]	ए. आई. आर. 1975 एस. सी. 1534 : **नारायण गणेश दस्ताने** बनाम **सुचेता नारायण दस्ताने** ;	12
[1965]	ए. आई. आर. 1965 इलाहाबाद 280 : **कुसुम लता** बनाम **कामता प्रसाद** ।	12

सिविल अपील अधिकारिता : 2017 की अपील संख्या 305.

1984 के कुटुंब न्यायालय अधिनियम की धारा 19 के अधीन अपील ।

याची की ओर से	श्री अरुण के. सिंह देशवाल
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री मनोज कुमार त्रिपाठी, नमित श्रीवास्तव, नरेश चंद्र त्रिपाठी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति विपिन चंद्र दीक्षित ने दिया ।

न्या. दीक्षित – यह प्रथम अपील प्रतिवादी-अपीलार्थी द्वारा 1955 के हिंदू विवाह अधिनियम (जिसको इसमें इसके पश्चात् 1955 का अधिनियम कहकर निर्दिष्ट किया गया है) की धारा 13 के अधीन फाइल किए गए 2011 के वाद संख्या 487 (**विकास सिंह** बनाम **श्रीमती नीलम देवी**) में हापुड़ के कुटुंब न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश द्वारा तारीख 25 मार्च, 2017 को पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध 1984 के कुटुंब न्यायालय अधिनियम (जिसको इसमें इसके पश्चात् 1984 का अधिनियम कहकर निर्दिष्ट किया गया है) की धारा 19 के अधीन फाइल की गई है, जिसके द्वारा वादी-प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए विवाह-विच्छेद के वाद को डिक्री कर दिया गया था ।

2. प्रत्यर्थी पति द्वारा फाइल की गई विवाह-विच्छेद याचिका इन अभिकथनों पर आधारित थी कि उसका विवाह प्रतिवादी-अपीलार्थी के साथ तारीख 20 जून, 2002 को हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार गाजियाबाद के परगना और तहसील गढ़मुक्तेश्वर के नायाजपुर खय्या ग्राम, जो प्रतिवादी-अपीलार्थी का पैतृक गांव है, में बिना किसी दहेज के संपन्न हुई थी । विवाह के पश्चात् वादी-प्रत्यर्थी प्रतिवादी-अपीलार्थी को गाजियाबाद के परगना और तहसील हापुड़ के गढ़रोड स्थित कुवेश्वर चौपाला में अपने घर ले आया । उसने पति होने के नाते अपनी समस्त बाध्यताओं का निर्वहन किया और सुखी वैवाहिक जीवन व्यतीत करने लगा और उसने अपनी हैसियत के अनुसार अपनी पत्नी की सभी सद्भावी आवश्यकताओं की पूर्ति भी की । उनकी पुत्री जिसका नाम कुमारी लावी है, का जन्म तारीख 1 जनवरी, 2004 को हुआ था । उसके द्वारा यह अभिकथन किया गया कि विवाह के दो वर्षों के पश्चात् दोनों पक्षों के मध्य संबंध तनावपूर्ण हो गए थे और प्रतिवादी ने उससे अपने परिवार से पृथक् होकर रहने के लिए कहने के द्वारा परेशानियां सृजित करना आरंभ कर दिया था । उसने आगे यह अभिकथन किया है कि प्रतिवादी

पत्नी घरेलू कार्य करने के लिए तैयार नहीं थी और उसने वादी-पति से लड़ाई-झगड़ा आरंभ कर दिया था । उसने आगे अभिकथित किया है कि वह वादी के अनुज्ञा के बिना अपने पिता के घर बारंबार चली जाती थी । इसके अलावा वह किसी अज्ञात व्यक्ति से टेलीफोन पर नियमित रूप से बातचीत करती रहती थी और इस बाबत पूछे जाने पर वह लड़ाई-झगड़ा करती थी । उसने आगे अभिकथन किया कि तारीख 27 मार्च, 2010 को, जब वादी अपने घर से बाहर था, प्रतिवादी किसी अज्ञात व्यक्ति से टेलीफोन पर बातचीत कर रही थी और जब वादी ने घर पहुंचने पर इस बाबत पूछताछ की कि वह किसके साथ बातचीत कर रही थी, तो प्रतिवादी ने क्रोधित होते हुए उसकी हत्या कराने की धमकी दी । प्रतिवादी के पिता और भाई उसी दिन पति और उसकी माता की पिटाई करने के लिए उसके घर आए । प्रतिवादी के पिता और भाई प्रतिवादी और उसकी बेटी कुमारी लावी को अपने साथ ले गए और जाते समय 60,000/- रुपए नगद और बीस तोला सोना भी वादी के घर से अपने साथ ले गए । वादी-अपीलार्थी ने आगे निवेदन किया है कि पत्नी अपनी वैवाहिक बाध्यताओं का निर्वहन विगत छह वर्षों से नहीं कर रही थी । उसने आगे अभिकथन किया कि पत्नी ने उसके विरुद्ध एक झूठा मामला दर्ज करा दिया था, जो मेरठ के महिला थाना में 2010 के मामला अपराध संख्या 23 के रूप में रजिस्ट्रीकृत हुआ था, जिसको बाद में सम्मानित लोंगों और नातेदारों के मध्यक्षेप के कारण वापस ले लिया गया था । दोनों पक्ष आपसी सहमति के आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए सहमत हो गए थे । विवाह-विच्छेद याचिका 1955 के अधिनियम की धारा 13-ख के अधीन तारीख 9 अप्रैल, 2010 को फाइल की गई थी, जिसको 2010 के वाद संख्या 176 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था, किंतु बाद में इस विवाह-विच्छेद याचिका को तारीख 16 अगस्त, 2011 को प्रतिवादी-अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए आवेदन के आधार पर वापस ले लिया गया था । जब प्रतिवादी-अपीलार्थी ने वादी-प्रत्यर्थी के साथ रहने से इनकार किया, तब विवशकारी परिस्थितियों के अंतर्गत वर्तमान विवाह-विच्छेद याचिका क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद की ईप्सा करते हुए फाइल की गई ।

3. प्रतिवादी-अपीलार्थी ने विवाह-विच्छेद याचिका की सूचना प्राप्त

होने पर उसका प्रतिवाद लिखित कथन फाइल किए जाने के द्वारा किया और उसने विवाह-विच्छेद याचिका में समाविष्ट अभिकथनों से इनकार किया । प्रतिवादी-अपीलार्थी द्वारा यह अभिकथन किया गया कि उसके पिता ने विवाह के संबंध में पंद्रह लाख रुपए खर्च किए थे और उन्होंने विवाह के समय समस्त गृह उपयोगी वस्तुएं उपलब्ध कराई थीं, किंतु उसके पति का परिवार दहेज की मांग को लेकर प्रसन्न नहीं था और उन्होंने एक कार और दो लाख रुपए नकद की अतिरिक्त मांग की थी । दहेज की इस अवैध मांग को उसके पिता द्वारा पूर्ण नहीं किया जा सका और इसी कारणवश उसके पति के परिवार के सदस्यों ने अपीलार्थी-प्रतिवादी के साथ गाली-गलौज करना और उसका उत्पीड़न करना आरंभ कर दिया था । उसने आगे अभिकथन किया कि उसके पति के मोहल्ले की एक विवाहित महिला के साथ अवैध संबंध थे और वह व्यभिचारी जीवन व्यतीत कर रहा था । जब दहेज की अवैध मांग को पूरा नहीं किया गया, तो उसको उसके पति और पति के परिवार के सदस्यों द्वारा मारा पीटा गया और उसको उसकी पुत्री कुमारी लावी के साथ उसके वैवाहिक घर से तारीख 27 मार्च, 2010 को बाहर निकाल दिया गया । उसने महिला थाना में एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई, जिसको भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क और 323 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन 2010 के मामला अपराध संख्या 23 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था । तत्पश्चात् वादी पति के बहनोई (जीजा) के हापुड़ स्थित निवास में तारीख 4 अप्रैल, 2010 को एक बैठक का आयोजन प्रतिवादी की अनुपस्थिति में किया गया और जिसमें वादी पति ने प्रतिवादी को अपनी पत्नी के रूप में साथ रखने से इनकार कर दिया था । उसने विवाह-विच्छेद की इच्छा व्यक्त की और प्रतिवादी को स्थायी रूप से निर्वाह भत्ता के रूप में आठ लाख रुपए और कुमारी लावी के भरणपोषण के लिए बारह लाख रुपए का संदाय करने के लिए तैयार हो गया था । प्रतिवादी पत्नी के पिता और उसके परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा दबाव डाले जाने पर आपराधिक मामले को वापस ले लिया । तत्पश्चात् तारीख 9 अप्रैल, 2010 को 1955 के अधिनियम की धारा 13-ख के अधीन विवाह-विच्छेद याचिका फाइल की गई, जिसको 2010 के विवाह-विच्छेद मामला संख्या 176 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया,

किंतु आपसी सहमति के साथ फाइल की गई पूर्ववर्ती विवाह-विच्छेद याचिका फाइल किए जाने के पश्चात् भी वादी-प्रत्यर्थी ने प्रतिवादी-अपीलार्थी को न तो सहमत रकम का संदाय किया और न ही उस रकम को कुमारी लावी के नाम में जमा किया और तत्पश्चात्, आपसी सहमति के साथ विवाह-विच्छेद के लिए फाइल की गई पूर्ववर्ती याचिका को बाद में तारीख 16 अगस्त, 2011 को उसके द्वारा फाइल किए आवेदन के आधार पर वापस ले लिया गया था । उसके द्वारा यह अभिवाक् भी किया गया है कि उसने वादी-प्रत्यर्थी का परित्याग कभी नहीं किया, बल्कि वादी-प्रत्यर्थी ने ही इतनी लंबी अवधि के लिए बिना किसी पर्याप्त कारणवश उसका परित्याग किया और अब वह उसको अपनी पत्नी के रूप में अपने साथ रखने के लिए तैयार नहीं है । वादपत्र में क्रूरता के संबंध में अभिकथित अभिकथनों से विनिर्दिष्ट रूप से इनकार किया गया और यह अभिकथन किया गया कि वह सदैव वादी-प्रत्यर्थी के साथ रहने के लिए तैयार थी और अभी भी तैयार है और उसने प्रार्थना की कि वादी-प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए विवाह-विच्छेद वाद को खारिज किया जाए ।

4. पक्षों के अभिवचनों के आधार पर विद्वान् परिवार न्यायालय द्वारा निम्नलिखित दो विवाद्यक विरचित किए गए :-

(i) क्या वादपत्र में उल्लिखित आधारों पर तारीख 20 जून, 2002 को संपन्न विवाह विघटित किए जाने योग्य है ?

(ii) कोई अन्य अनुतोष ?

5. दोनों पक्षों ने अपने-अपने मामले के समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत किए । वादी-प्रत्यर्थी स्वमेव वादी-साक्षी 1 के रूप में उपस्थित हुआ और उसने 1955 के अधिनियम की धारा 13-ख के अधीन फाइल की गई विवाह-विच्छेद याचिका और उस विवाह-विच्छेद याचिका पर पारित आदेश की प्रतियां न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की, जबकि प्रतिवादी-अपीलार्थी स्वमेव प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में उपस्थित हुआ ।

6. विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने तारीख 25 मार्च, 2017 के निर्णय और आदेश द्वारा विवाह-विच्छेद याचिका मंजूर कर ली, जिसको वर्तमान अपील में आक्षेपित किया गया है ।

7. पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और दोनों पक्षों द्वारा फाइल किए गए अभिलेख और साथ ही लिखित निवेदनों और निर्णयज विधियों का परिशीलन किया ।

8. वादी-प्रत्यर्थी ने क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद की ईप्सा करते हुए विवाह-विच्छेद याचिका यह अभिकथित करते हुए फाइल की थी कि पत्नी बिना उसकी अनुज्ञा के अपने माता-पिता के घर चली जाती थी और उससे उसके परिवार से पृथक् होकर रहने के लिए दबाव डालती थी । इसके अतिरिक्त, वह नियमित रूप से किसी अज्ञात व्यक्ति से टेलीफोन पर बातचीत करती रहती थी, जबकि प्रतिवादी-अपीलार्थी ने इन अभिकथनों से इनकार किया । उसके द्वारा यह अभिवचन किए गए कि पति और उसके परिवार के सदस्य दहेज की मांग पूर्ण न किए जाने के कारण उसका उत्पीड़न करते थे । उसने यह अभिकथन भी किया कि वादी प्रत्यर्थी के मोहल्ले की एक विवाहित महिला के साथ अवैध सम्बंध थे और वह व्यभिचारी जीवन व्यतीत कर रहा था । विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने पति और पत्नी दोनों के द्वारा एक दूसरे के विरुद्ध लगाए गए व्यभिचारी वाले अभिकथनों पर अविश्वास किया, किंतु तारीख 25 मार्च, 2017 के निर्णय और डिक्री द्वारा विवाह-विच्छेद याचिका को इस आधार पर मंजूर कर लिया गया कि पत्नी का व्यवहार एक आदर्श नारी के व्यवहार जैसा नहीं है, चूंकि वह अपने माता-पिता के घर मे रहा करती थी और अपने पति के विरुद्ध बिना किसी ऐसे आधार के, जिनके कारण क्रूरता का मामला बनाता हो, आरोप लगा रही है ।

9. विवाह-विच्छेद की डिक्री को प्रतिवादी-अपीलार्थी द्वारा वर्तमान अपील में इस आधार पर चुनौती दी गई है कि विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा निरंतर रूप से या बारंबार क्रूरता के संबंध में कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया है, जैसाकि 1955 के हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 (स्क) द्वारा अपेक्षित है । विद्वान् निचले न्यायालय ने अपीलार्थी-प्रतिवादी पर क्रूरता का आधार साबित किए जाने का भार दोषपूर्ण ढंग से अंतरित कर दिया था, फिर भी वादी-प्रत्यर्थी द्वारा इसको साबित किया गया । अपीलार्थी-पत्नी के विद्वान् काउंसेल

ने **सावित्री पांडे** बनाम **प्रेमचंद्र पांडेय**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के पैरा 6 का अवलंब लिया, जिसको नीचे उद्धृत किया गया है :-

"6. याची के साथ क्रूरता का व्यवहार अधिनियम की धारा 13(1)(स्क) के अधीन विवाह-विच्छेद का आधार होता है । क्रूरता को अधिनियम के अंतर्गत परिभाषित नहीं किया है, बल्कि वैवाहिक मामलों के संबंध में इसको ऐसे आचरण के रूप में अनुध्यात किया गया है, जो प्रत्यर्थी के साथ याची के जीवन यापन के लिए घातक हो । क्रूरता में वे कार्य समाविष्ट होते हैं, जो जीवन, अंगों या स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं । अधिनियम के प्रयोजनार्थ क्रूरता से आशय ऐसी स्थिति से है, जहां एक जीवन साथी ने दूसरे जीवन साथी के साथ ऐसा व्यवहार किया हो और उसके प्रति ऐसी भावनाओं का इजहार किया हो, जिससे उसको शारीरिक क्षति कारित हुई हो या शारीरिक क्षति कारित होने या सहन करने की या स्वास्थ्य खराब होने की युक्तिसंगत संभावना उत्पन्न हो गई हो । क्रूरता शारीरिक या मानसिक हो सकती है । मानसिक क्रूरता एक जीवन साथी का दूसरे जीवन साथी के प्रति ऐसा आचरण है, जो दूसरे जीवन साथी के वैवाहिक जीवन के प्रति मानसिक यातना या भय उत्पन्न करता हो । अतः, 'क्रूरता' से आशय याची के ऐसे व्यवहार से है, जो दूसरे जीवन साथी के मस्तिष्क में इस बाबत युक्तिसंगत आशंका उत्पन्न कर दे कि उसके लिए याची के साथ जीवन यापन करना नुकसानदायक या हानिकारक होगा । तथापि, क्रूरता को पारिवारिक जीवन के सामान्य झगड़ों से विभेदित किया जाना चाहिए । इसको याची की संवेदनशीलता के आधार पर निर्णीत नहीं किया जा सकता और इसका न्यायनिर्णयन आचरण के उस अनुक्रम के आधार पर किया जाना चाहिए जो सामान्यतः एक जीवन साथी के दूसरे जीवन साथी के साथ जीवनयापन के लिए खतरनाक हो । हमारे समक्ष उपस्थित मामले में विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय, दोनों ही तथ्यों के आधार पर इस निष्कर्ष पर

[1] ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 591.

पहुंचे कि पत्नी प्रत्यर्थी के विरुद्ध आरोपित क्रूरता के अभिकथनों को साबित कर पाने में विफल रही । न्यायालयों द्वारा तथ्यों के आधार पर निकाले गए समवर्ती निष्कर्षों में इस न्यायालय द्वारा संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन व्यवधान नहीं किया जा सकता । इसके अतिरिक्त भी याचिका में किए गए प्रकथनों और उनके समर्थन में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के आधार पर यह स्पष्टत: दर्शित होता है कि यदि लगाए गए आरोपों को साबित अभिनिर्धारित कर दिया जाए, तो भी प्रत्यर्थी के आचरण के संबंध में अपीलार्थी की संवेदनशीलता ही दर्शित होगी, जिसको पारिवारिक जीवन के मामूली झगड़ों से अधिक कुछ भी नहीं कहा जा सकता ।"

10. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि निचला न्यायालय इस तथ्य पर विचार करने में विफल रहा कि पत्नी पति के साथ जीवन यापन करना चाहती है और उन्होंने इस संबंध में पत्नी के लिखित कथन और साथ ही उसके मौखिक कथन में किए गए विनिर्दिष्ट प्रकथन का त्रुटिपूर्वक अनदेखा किया है । अपीलार्थी-प्रतिवादी के विद्वान् काउंसेल द्वारा आगे यह दलील दी गई कि आक्षेपित निर्णय विवाह के असुधार्य रूप से भंग के आधार पर पारित किया गया था, यद्यपि यह 1955 के हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 के अधीन कानूनी आधार नहीं है और वास्तव में पति ने स्वमेव अपीलार्थी को अपने साथ रखने से इनकार कर दिया था । **सावित्री पांडेय** (उपरोक्त) वाले मामले के पैरा 7, 7ए, 13 और 16 का अवलंब लिया गया :-

"7. अभिवचन और सबूत के अभाव में परित्याग के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान नहीं की जा सकती । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि पक्षों ने विनिर्दिष्ट विवाद्यक के अभाव में साक्ष्य पेश किए और कुटुंब न्यायालय के समक्ष इस बाबत पर्याप्त सामग्री उपलब्ध थी कि वह परित्याग के साबित हो जाने के आधार पर अपना विनिश्चय दे सकता था । हमने विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए निवेदनों के प्रकाश में इस तथ्य के बावजूद कि कोई विनिर्दिष्ट विवाद्यक विरचित नहीं किया

गया या विरचित किए जाने पर जोर नहीं दिया गया, मामले के इस पहलू का परीक्षण करने का निश्चय किया है ।

7ए. अधिनियम के अंतर्गत विवाह-विच्छेद की ईप्सा किए जाने के प्रयोजनार्थ 'परित्याग' का आशय आशयित स्थायी परित्याग और बिना दूसरे जीवन साथी की सहमति और बिना किसी युक्तिसंगत कारण के एक जीवन साथी का दूसरे जीवन साथी द्वारा अस्वीकरण है । अन्य शब्दों में यह विवाह की बाध्यता का पूर्णरुपेण अस्वीकरण है । परित्याग एक स्थान से वापसी नहीं है बल्कि यह वस्तुस्थिति से वापसी है । इसलिए परित्याग का अर्थ है वैवाहिक बाध्यताओं से वापसी अर्थात् दोनों पक्षों के मध्य सहवास की अनुमति या अनुज्ञा न दिया जाना और उसको सुकर न बनाना । परित्याग के सबूत पर विवाह की संकल्पना पर विचार करते हुए विचार किया जाना चाहिए, जो विधि की दृष्टि में नस्ल की शाश्वतता के लिए समाज में पुरुष और स्त्री के मध्य लैंगिक संबंधों को विधिक स्वरूप प्रदान करता है और स्वैच्छाचारिता को प्रवारित किए जाने के प्रयोजनार्थ मनोवेग में विधि को अंतर्वलित किए जाने की अनुज्ञा प्रदान करता है और यह बच्चों के प्रजन्न के लिए है । परित्याग कोई एकल कार्य नहीं है, जो स्वमेव में पूर्ण हो, यह आचरण का निरंतर अनुक्रम है, जिसको प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अंतर्गत विनिर्धारित किया जाता है । इस न्यायालय ने अनेक निर्णयज विधियों और विभिन्न लेखकों के विचारों को निर्दिष्ट किए जाने के पश्चात् विपिनचंद्र जैयसिंहभाई शाह **बनाम** प्रभावती [ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 176] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया कि यदि कोई जीवन साथी अस्थायी आवेग की दशा में दूसरे जीवन साथी का परित्याग करता है, उदाहरणार्थ सहवास को समाप्त करने का स्थायी रूप से आशय रखे बिना क्रोध या घृणा के कारण, तो यह परित्याग नहीं होगा । माननीय उच्चतम न्यायालय ने आगे यह अभिनिर्धारित किया –

'जहां तक परित्याग करने वाले जीवन साथी का संबंध है, परित्याग के प्रयोजनार्थ दो शर्तें आवश्यक हैं, अर्थात् (1)

पृथक्करण का तथ्य और (2) सहवास को स्थायी रूप से समाप्त करने का आशय (अधित्यजन का आशय) । इसी प्रकार से जहां तक परित्यक्त जीवन साथी का संबंध है, दो तत्व आवश्यक हैं :- (1) सहमति का अभाव और (2) जीवन साथी को युक्तिसंगत कारण, जिस कारणवश उसने उसने पूर्वोक्त आवश्यक आशय दर्शित करते हुए अपने वैवाहिक घर को छोड़ा, प्रदान करने वाले आचरण का अभाव । विवाह-विच्छेद के लिए याची, जो दोनों जीवन साथियों में से कोई एक हो सकता है, पर इन दो तत्वों को साबित करने का भार होता है । यहां पर इंग्लिश विधि और बाम्बे विधानमंडल द्वारा अधिनियमित विधि के मध्य अंतर पर चर्चा की जाती है । जबकि इंग्लिश विधि के अधीन आवश्यक शर्तों को विवाह-विच्छेद के लिए वाद संस्थित कराए जाने के तुरंत पश्चात् निरंतर तीन वर्ष की अवधि के दौरान जारी रहना चाहिए, बाम्बे विधि के अंतर्गत यह अवधि चार वर्ष है और इस अवधि के दौरान यह विनिर्दिष्ट नहीं किया गया है कि यह अवधि विवाह-विच्छेद के लिए कार्यवाही आरंभ किए जाने के तुरंत पश्चात् की होनी चाहिए । क्या अंतिम खंड के विलोपन का व्यवहारिक रूप से कोई परिणाम निकलेगा, हमको बाध्य नहीं कर सकता चूंकि यह वर्तमान मामले में विनिश्चय की अपेक्षा नहीं करता । परित्याग मध्यक्षेप का मामला होता है, जिसके बाबत प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर विनिश्चय किया जाता है । अनुमान कतिपय तथ्यों, जो हमको किसी अन्य मामले में अन्य अनुमान लगाए जाने के समर्थ नहीं बनाते, के आधार पर लगाया जाता है ; अर्थात्, तथ्यों के प्रयोजनार्थ, जिनका प्रकटीकरण उन कार्यों या आचरण और आशय की अभिव्यक्ति द्वारा किया जाता है, पृथक्करण के वास्तविक कार्यों के पूर्ववर्ती और पश्चात्वर्ती, दोनों को ध्यान में रखते हुए विचार किया जाना चाहिए । यदि वास्तव में पृथक्करण होता है, तो आवश्यक प्रश्न सदैव यह होगा कि क्या वह कार्य अधित्यजन

के आशय को आरोपित किया जा सकता है । परित्याग का अपराध तब आरंभ होता है, जब पृथक्करण का तथ्य और अधित्यजन का आशय एक साथ विद्यमान हों । किंतु यह आवश्यक नहीं है कि वे दोनों ही एक समय में आरंभ हों । वस्तुतः पृथक्करण आवश्यक अधित्यजन के आशय के बिना भी आरंभ हो सकता है या यह भी संभव है कि पृथक्करण और अधित्यजन का आशय एक ही समय बिंदु पर उपस्थित हों । उदाहरणार्थ, जब पृथक् होने वाला जीवन साथी अपने वैवाहिक घर का परित्याग इस अभिव्यक्त या सारगर्भित आशय के साथ करता है कि वह सहवास को स्थायी रूप से समाप्त कर रहा है । इंग्लैंड की विधि में तीन वर्ष की अवधि और बाम्बे अधिनियम में चार वर्ष की अवधि उस निरंतर अवधि के रूप में, जिसके दौरान दोनों तत्वों को एक साथ विद्यमान होना चाहिए, विहित की गई है । अतः, यदि कोई परित्याग करने वाला जीवन साथी पृथक्करण के अपराध से विमुख होने के अवसर का लाभ लेना चाहता है, जो उसको विधि द्वारा उपलब्ध कराया गया है और वह परित्यक्त जीवन साथी के पास वैवाहिक जीवन के समस्त परिणामों को जानते हुए अपने वैवाहिक घर वापस आने के लिए सद्भाविक प्रस्ताव के आधार पर परित्यक्त जीवन साथी के पास वापस आने का निर्णय लेता है, इसके पहले कि कानूनी अवधि समाप्त हो जाए या उस अवधि के व्यतीत हो जाने के पश्चात् भी, जब तक कि विवाह-विच्छेद की कार्यवाही आरंभ न हुई हो, तो परित्याग समाप्त हो जाता है और यदि परित्यक्त जीवन साथी उस प्रस्ताव को मानने से अयुक्तियुक्त रूप से इनकार करता है, तो यह माना जाएगा कि दूसरे पक्ष ने परित्याग किया है न कि पहले ने । अतः, यह आवश्यक है कि समस्त अवधि के दौरान परित्याग अस्तित्व में होना चाहिए, जीवन साथी को विवाह की पुष्टि करनी चाहिए और वैवाहिक जीवन में पुनः प्रवेश करने के लिए उन शर्तों पर इच्छुक होना चाहिए, जो युक्तिसंगत हों । यह भी सुस्थापित है कि विवाह-

विच्छेद की कार्यवाही में वादी को परित्याग के अपराध को समस्त युक्तिसंगत संदेहों के परे साबित करना चाहिए, जैसे कि किसी अन्य वैवाहिक अपराध के मामले में होता है । अतः, यद्यपि विधि के आत्यंतिक नियम के रूप में पुष्टिकरण अपेक्षित नहीं होता, फिर भी न्यायालय पुष्टिकरण साक्ष्य पर जोर देते हैं, जब तक कि उसकी अनुपस्थिति न्यायालय के समाधान के लिए अपेक्षित न हो ।'

13. अधिनियम के अंतर्गत किसी कार्रवाई, चाहे उस कार्रवाई से प्रतिरक्षा की गई हो या नहीं, में न्यायालय याची को अनुतोष प्रदान करने से इनकार कर देगा, यदि वह इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि याची अधिनियम की धारा 23(1) के अधीन अनुध्यात अनुतोषों के प्रयोजनार्थ अपनी स्वयं की गलती या निर्योग्यता का लाभ ले रहा था । किसी भी पक्ष को यह अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती कि वह परिवार, जो समाज की आधारी ईकाई है, को नष्ट करने का आधार सृजित करे । परिवार का आधार विधिक और विधिमान्य विवाह की संस्था पर आधारित होता है । यहां न्यायालय का दृष्टिकोण यह होना चाहिए कि वह किसी के वैवाहिक घर को परिरक्षित करे और दोनों में से किसी एक पक्ष द्वारा मांग किए जाने पर भी विवाह के विघटित करने के प्रति अनिच्छुक रहे ।

16. इस न्यायालय ने मैसर्स जोर्डन डींगडेह **बनाम** एस. एस. चोपड़ा (ए. आई. आर. 1985 एस. सी. 935) वाले मामले में वैवाहिक विधि में सर्वांगीण सुधार और उसको धर्म या जाति पर विचार किए बिना सभी लोगों पर समान विधि के रूप से लागू किए जाने का सुझाव दिया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मताभिव्यक्ति की कि --

'यह आवश्यक प्रतीत होता है कि समस्त मामलों में विवाह-विच्छेद के आधारों के रूप में असुधार्य रूप से टूटने वाले विवाह और आपसी सहमति के आधार पर टूटने वाले विवाह को सम्मिलित किया जाए । ..... ऐसे विवाह, जो पूर्णतया या एकपक्षीय रूप से टूट चुके हैं, को जारी रखे जाने

के द्वारा किसी उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती । हम यह सुझाव देते हैं कि अब समय आ गया है जब विधानमंडल ऐसे मामलों में मध्यक्षेप करे और विवाह और विवाह-विच्छेद की समान संहिता के लिए उपबंधित करे और विधि द्वारा ऐसी दुख:द स्थिति के बाबत विचार करें, जिसमें विवाहित युगल जैसेकि वर्तमान मामले के युगल स्वयं को पाते हैं ।'

पक्षों के मध्य विवाह को मात्र दोनों में से किसी एक पक्ष द्वारा किए गए इस प्रकथन के आधार पर विघटित नहीं किया जा सकता कि चूंकि उनके मध्य विवाह टूट चुका है और वर्तमान में इस विवाह को जीवित रखे जाने से किसी लाभदायक उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी । विधानमंडल ने अपनी बुद्धिमत्ता का प्रयोग करते हुए इस न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्तियों के बावजूद इस बात को उचित नहीं समझा कि ऐसे प्रकथनों के आधार पर विवाह को विघटित किए जाने के लिए उपबंधित किया जाए । ऐसे अनेक मामले हैं, जिनमें तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि चूंकि विवाह दोनों पक्षों द्वारा योगदायी कार्यों और त्रुटियों के कारण मृत हो चुका है, अत: ऐसे विवाह को जीवित रखे जाने के द्वारा किसी लाभदायक उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी । विवाह की पवित्रता को किसी एक नाराज जीवन साथी की सनक के भरोसे नहीं छोड़ी जा सकती । इस न्यायालय ने वी. भगत **बनाम** श्रीमती डी. भगत (ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 710) वाले मामले में अभिनिर्धारित किया कि विवाह का असुधार्य रूप से टूटना स्वयमेव में विवाह को विघटित किए जाने का आधार नहीं होता ।"

11. अपीलार्थी-प्रतिवादी के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह निवेदन भी किया गया कि विद्वान् निचले न्यायालय ने वादपत्र में किए गए इस प्रकथन का अवलंब लिया कि 1955 के हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13-ख के अधीन पारस्परिक सहमति के आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए याचिका फाइल की गई थी, जिससे पत्नी की विवाह-विच्छेद के प्रति इच्छुक होना साबित होता है, किंतु विद्वान् निचला न्यायालय इस बात पर विचार करने में विफल रहा कि प्रतिवादी-अपीलार्थी द्वारा दी गई

सहमति को द्वितीय सुनवाई के प्रक्रम के पहले ही वापस ले लिया गया था । उन्होंने **हितेश भटनागर** बनाम **दीपा भटनागर**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के पैरा 7, 8 और 9 का भी अवलंब लिया, जिनको नीचे प्रत्युपादित किया गया है :-

"7. अपीलार्थी ने व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होते हुए निवेदन किया कि याचिका फाइल किए जाते समय पक्षों के मध्य एक समझौता हुआ था, जिसके आधार पर यह सहमति हुई थी कि वह 3.5 लाख रुपए का संदाय करेगा, जिसमें से उसके कथनानुसार 1.5 लाख रुपए का संदाय तीन किश्तों में पहले ही किया जा चुका है । उसने अपनी अपील में और साथ ही हमारे समक्ष अभिकथित किया कि वह मामले के शांतिपूर्वक समाधान के प्रयोजनार्थ सारभूत वित्तीय संदाय किए जाने के द्वारा प्रत्यर्थी और उसकी पुत्री के भविष्य के हितों की देखभाल करने का इच्छुक है । तथापि, प्रत्यर्थी समझौते के बारंबार प्रयासों के बावजूद विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए सहमत नहीं है । वह कहती है कि वह अपीलार्थी के साथ उसकी पत्नी के रूप में रहना चाहती है, विशेष रूप से अपनी एक मात्र बच्ची अनामिका के भविष्य को ध्यान में रखते हुए ।

8. यह प्रश्न कि क्या पारस्परिक सहमति के आधार पर विवाह-विच्छेद की किसी कार्रवाई में दी गई सहमति को वापस लिया जा सकता है, अब अनिर्णीत विषय नहीं रह गया है । इस न्यायालय ने श्रीमती सुरेशता देवी **बनाम** ओमप्रकाश [(1991) 2 एस. सी. सी. 25 = ए. आई. आर. 1992 एस. सी. 1904] वाले मामले में इस विवाद्यक पर विचार किया और इस मामले में दिए गए विनिश्चय में व्यक्त किए गए विचार वर्तमान में इस प्रकार के मामलों में लागू हैं ।

9. इस न्यायालय ने **सुरेशता देवी** (उपरोक्त) वाले मामले में निम्नलिखित विचार व्यक्त किए –

"9. एक वर्ष की अवधि तक 'पृथक् रूप से जीवन यापन'

[1] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1637.

के तुरंत पश्चात् याचिका प्रस्तुत की जानी चाहिए । यह आवश्यक है कि याचिका के प्रस्तुतीकरण के तुरंत पूर्व दोनों पक्ष पृथक् रूप से रह रहे थे । 'पृथक् रूप से रहने' अभिव्यक्ति का हमारे विचार में यह अर्थ नहीं है कि पति-पत्नी की भांति रह रहे हैं । इसमें रहने के स्थान को निर्दिष्ट नहीं किया गया है । दोनों पक्ष परिस्थितियोंवश एक ही छत के नीचे रह सकते हैं और यह आवश्यक नहीं कि वे अलग-अलग घरों में रहते हों और फिर भी वे पति और पत्नी की भांति रह सकते हैं । यहां पर जो बात आवश्यक है, वह यह है कि क्या उनमें वैवाहिक बाध्यताओं का निर्वहन करने की कोई इच्छा शेष नहीं रह गई है और वे उस मानसिक स्थिति के साथ याचिका के प्रस्तुतीकरण के तुरंत पूर्व एक वर्ष की अवधि से अलग-अलग रह रहे हैं । द्वितीय अपेक्षा यह है कि 'वे एक साथ रहने के समर्थ नहीं हो सके हैं', से विवाह के भंग की संकल्पना निर्दिष्ट होती है और अब यह संभव नहीं रह गया है कि दोनों के मध्य कोई सुलह हो सके । तृतीय अपेक्षा यह है कि वे परस्पर सहमति के आधार पर विवाह को विघटित करने के लिए सहमत हो गए हैं ।

10. उपधारा (2) के अधीन पक्षों से यह अपेक्षित है कि वे अर्जी पेश किए जाने की तारीख से छह माह के पश्चात् और उस तारीख से 18 मास के पूर्व दोनों पक्षों द्वारा किए गए प्रस्तावों, पर यदि इस बीच याचिका वापस न ले ली गई है, न्यायालय पक्षकारों को सुनने के पश्चात् और ऐसी जांच के पश्चात्, जो वह उचित समझे, अपना यह समाधान कर लेने पर कि विवाह अनुष्ठापित हुआ है और याचिका में किए गए प्रकथन सही हैं, यह घोषणा करते हुए विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करेगा कि विवाह डिक्री की तारीख से विघटित हो जाएगा । यह प्रस्ताव न्यायालय को याचिका में किए गए प्रकथनों की शुद्धता के बाबत संतुष्ट होने और इस निष्कर्ष पर पहुंचने के बाबत कि क्या सहमति बलपूर्वक, कपट द्वारा या

अनुचित प्रभाव का प्रयोग किए जाने के द्वारा तो अभिप्राप्त नहीं की गई थी, मामले में अग्रसर होने के समर्थ बनाता है । न्यायालय अपने समाधान के प्रयोजनार्थ कि क्या याचिका में किए गए प्रकथन सत्य हैं, पक्षों की सुनवाई या परीक्षण को सम्मिलित करते हुए इस बाबत जांच कर सकता है, जो वह उचित समझे । यदि न्यायालय इस बाबत संतुष्ट है कि पक्षों द्वारा दी गई सहमति बलपूर्वक, कपट द्वारा या अनुचित प्रभाव का प्रयोग करते हुए अभिप्राप्त नहीं की गई और वे परस्पर सहमति के आधार पर इस बाबत सहमत थे कि विवाह को विघटित कर दिया जाना चाहिए, तो वह विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित कर सकता है ।"

इस प्रश्न के संबंध में कि क्या दोनों में से एक पक्ष विवाह-विच्छेद की सहमति को विवाह-विच्छेद की वास्तविक डिक्री पारित किए जाने के पूर्व किसी भी समय-बिंदु पर वापस ले सकता है –

13. इस धारा के विश्लेषण से यह प्रकट होता है कि पारस्परिक सहमति के साथ फाइल की गई याचिका न्यायालय को विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित किए जाने के लिए प्राधिकृत नहीं करती । इसके लिए 6 से 18 माह की प्रतीक्षा अवधि होती है । यह मध्यवर्ती अवधि स्पष्टत: दोनों पक्षों को समय और अवसर प्रदान किए जाने के लिए आशयित थी, ताकि वे अपने निर्णय पर पुनर्विचार कर सकें और अपने नातेदारों और मित्रों से परामर्श कर सकें । यह संभव है कि इस संक्रमणकाल में दोनों में से किसी एक पक्ष के मस्तिष्क में द्वितीय विचार स्थान प्राप्त कर ले और याचिका में आगे अग्रसर होने के बाबत उसका विचार परिवर्तित हो जाए । यह संभव है कि कोई भी जीवन साथी उपधारा (2) के अधीन उपबंधित संयुक्त प्रस्ताव का पक्ष न हो । इस धारा में ऐसा कुछ भी नहीं है, जो ऐसे किसी अनुक्रम को प्रवारित करता हो । यह धारा यह उपबंधित नहीं करती कि यदि विवाह-विच्छेद के विचार में परिवर्तन हो जाता है, तो वह विचार केवल एक पक्ष

का नहीं होना चाहिए बल्कि दोनों पक्षों का होना चाहिए । बाम्बे और दिल्ली, दोनों उच्च न्यायालय इस आधार पर अग्रसर हुए थे कि विवाह-विच्छेद के लिए पारस्परिक सहमति प्रदान किए जाने का निर्णायक समय याचिका फाइल किए जाने का समय है और वह समय नहीं है जब वे बाद में विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए संयुक्त प्रस्ताव प्रस्तुत करते हैं । यह दृष्टिकोण समर्थन किए जाने योग्य प्रतीत नहीं होता । पारस्परिक सहमति द्वारा याचिका फाइल किए जाने का समय क्या होगा, इस बाबत पक्ष अनभिज्ञ नहीं होते और उनकी याचिका स्वयमेव ही वैवाहिक बंधनों को समाप्त नहीं करती । वे इस बात को भलीभांति जानते हैं कि उनको वैवाहिक बंधनों को समाप्त करने के लिए अभी आगे की कार्रवाई शेष है । इस बिंदु पर धारा 13-ख की उपधारा (2) स्पष्ट है । यह उपधारा उपबंधित करती है कि 'दोनों पक्षकारों द्वारा किए गए प्रस्ताव पर, यदि इस बीच अर्जी वापस नहीं ले ली गई है तो, न्यायालय .... विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करेगा ... ...।' इस उपबंध में जो बात महत्वपूर्ण है, वह यह है कि जब वे विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित किए जाने के अनुरोध के साथ न्यायालय की शरण में जाएं, तो उनके मध्य पारस्परिक सहमति भी होनी चाहिए । द्वितीयतः, न्यायालय को दोनों पक्षों की सद्भाविकता और सहमति के बाबत संतुष्ट होना चाहिए । यदि जांच के समय दोनों पक्षों के मध्य पारस्परिक सहमति नहीं है, तो न्यायालय को विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई अधिकारिता प्राप्त नहीं होगी । यदि दोनों पक्षों के दृष्टिकोण अन्यथा हैं, तो न्यायालय जांच कर सकता है और दोनों में से किसी एक पक्ष की पहल पर और दूसरे पक्ष की सहमति के विरुद्ध भी विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित कर सकता है । ऐसी डिक्री पारस्परिक सहमति द्वारा पारित की गई डिक्री नहीं कही जा सकती ।"

12. वादी-प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने कुटुंब न्यायालय के

आक्षेपित निर्णय का समर्थन इस आधार पर किया कि निचले न्यायालय ने इस बाबत निष्कर्ष अभिलिखित किए थे कि पत्नी का आचरण आदर्श महिला का नहीं था और वह अपने पति के विरुद्ध क्रूरता का व्यवहार कर रही थी और उसने अपने पति के विरुद्ध व्यभिचार में अंतर्वलित होने के असत्य आरोप लगाए थे, किंतु उन आरोपों को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई ठोस साक्ष्य प्रस्तुत करने में विफल रही । वादी-प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा आगे निवेदन किया गया कि पत्नी ने बिना किसी पर्याप्त कारण के अपने पति का घर छोड़ दिया था और वह विगत तीन वर्षों से अपने माता-पिता के घर में निवास कर रही थी । इस अवधि के दौरान पक्षों के मध्य पति और पत्नी का कोई संबंध नहीं था । प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने निम्नलिखित निर्णयज विधियों का अवलंब लिया :-

(i) **कुसुम लता** बनाम **कामता प्रसाद**[1],

(ii) **नारायण गणेश दस्ताने** बनाम **सुचेता नारायण दस्ताने**[2], और

(iii) **मंजीत कौर** बनाम **अवतार सिंह**[3] ।

13. पूर्वोक्त निर्णयों का अवलंब विद्वान् कुटुंब न्यायालय द्वारा 'क्रूरता' शब्द पर विचार करते हुए लिया गया था ।

14. इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **श्रीमती सरिता देवी** बनाम **अशोक कुमार सिंह**[4] वाले मामले में दिए गए निर्णय में 'क्रूरता' शब्द पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए अनेक विनिश्चयों का अवलंब लेते हुए अत्यंत विस्तारपूर्वक विचार किया । इस निर्णय के सुसंगत पैरा 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 25, 27 और 29 को नीचे प्रत्युपादित किया गया है :-

"18. क्रूरता की संकल्पना को इंग्लैंड की हाल्सवरी विधि के खंड 13 के चौथे संस्करण के पैरा 1269 में संक्षेप में स्पष्ट किया गया है, जो निम्नलिखित है –

---

[1] ए. आई. आर. 1965 इलाहाबाद 280.

[2] ए. आई. आर. 1975 एस. सी. 1534.

[3] 2001 हिंदू ला रिपोर्ट 614.

[4] 2018(3) ए. डब्ल्यू. सी. 2328.

'क्रूरता के समस्त मामलों में सामान्य नियम यह है कि (पक्षों के मध्य) संपूर्ण वैवाहिक संबंधों पर विचार किया जाना चाहिए और यही नियम विशेष महत्व का नियम है, जब क्रूरता में न केवल हिंसात्मक कार्य समाविष्ट नहीं होते, बल्कि हानिकारक उलाहने, शिकायतें, दोषारोपण या तंज भी समाविष्ट होते हैं । ऐसे मामलों, जिनमें किसी प्रकार की हिंसा का प्रकथन नहीं किया गया है, पर कार्यों या आचरण की कतिपय कोटियां सृजित किए जाने को दृष्टि में रखते हुए न्यायिक उद्घोषणा के रूप में विचार किया जाना अवांछनीय होगा, चूंकि ऐसे मामलों में हिंसात्मक प्रकृति की कमी या (हिंसा की) गुणवत्ता में कमी मामले को क्रूरता के कारणों की समस्त परिस्थितियों में समर्थ या असमर्थ बना देती है ; क्योंकि (ऐसी परिस्थितियों में मामला) क्रूरता की किसी शिकायत के निर्धारण में आचरण सर्वोपरि महत्व का विषय होता है । क्या एक जीवन साथी को दूसरे जीवन साथी के प्रति क्रूरता का दोषी ठहराया जा सकता है, यह आवश्यक रूप से तथ्य का प्रश्न है और पूर्व में निर्णीत मामलों, यदि कोई हों पर न्यूनतम प्रभाव रखता है । न्यायालय को पक्षों की शारीरिक और मानसिक दशा को और साथ ही उनकी सामाजिक हैसियत को ध्यान में रखना चाहिए और इस दृष्टिकोण से दोनों जीवन साथियों के मध्य समस्त घटना और झगड़ों का संज्ञान लेते हुए एक जीवन साथी के व्यक्तित्व और आचरण का दूसरे जीवन साथी के मस्तिष्क पर क्या प्रभाव पड़ा, इस बात को ध्यान में रखना चाहिए; इसके अतिरिक्त, अभिकथित आचरण का परीक्षण शिकायतकर्ता की सहनशीलता और इस बात को ध्यान में रखते हुए कि उसकी सहनशीलता दूसरे जीवन साथी को ज्ञात है, के प्रकाश में किया जाना चाहिए । क्रूरता के प्रयोजनार्थ द्वेषपूर्ण आशय आवश्यक नहीं होता किंतु यह जहां पर भी विद्यमान होता है, आवश्यक तत्व होता है ।'

19. 24 अमेरिकन ज्यूरिस्प्रूडेंस के द्‌वितीय संस्करण में 'मानसिक क्रूरता' शब्द को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया गया है –

"मानसिक क्रूरता' किसी जीवन साथी के प्रति बिना किसी उकसावे के कारित आचरण के अनुक्रम के दौरान किया गया आचरण है, जिसके कारण शर्मिंदगी, अपमान और व्यथा कारित होती है और जिसके कारण जीवन साथी का जीवन दयनीय और असहनीय हो जाता है । वादी को प्रतिवादी द्‌वारा आचरण के उस अनुक्रम को दर्शित करना चाहिए, जो उसके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए संकट उत्पन्न करने वाला हो, जिसके कारण सहवास असुरक्षित और अनुचित हो गया हो, यद्‌यपि वादी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह शारीरिक हिंसा के वास्तविक दृष्टांत प्रस्तुत करे ।'

20. हम 'मानसिक क्रूरता' पर विचार करते हुए एक पूर्ववर्ती विनिश्चय एन. जी. दस्ताने **बनाम** एस. दस्ताने [(1975) 2 एस. सी. सी. 326] वाले मामले में दिए गए निर्णय पर विचार करते हैं, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया –

'अत: इस बाबत जांच की जानी चाहिए कि वह आचरण जिसके बाबत क्रूरता का आरोप लगाया गया है, ऐसी प्रकृति का है, जो याची के मस्तिष्क में इस बाबत युक्तियुक्त आशंका उत्पन्न करने वाला हो कि उसके लिए प्रत्यर्थी के साथ जीवन-यापन करना हानिकारक और कष्टदायक होगा ।'

21. सिराज मोहम्मद खान जान मोहम्मद खान **बनाम** हैजुन्निसा यासीनखान और एक अन्य [(1981) 4 एस. सी. सी. 250] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि विधिक रूप से क्रूरता की संकल्पना सामाजिक संकल्पना के परिवर्तनों और अभिवृद्धि और जीवनस्तर के अनुसार परिवर्तित होती रहती है । इस लक्षण ने सामाजिक संकल्पनाओं में अभिवृद्धि के साथ-साथ इस बाबत विधायी मान्यता प्राप्त कर ली है कि

द्विवतीय विवाह पृथक् रूप से निवास और भरण-पोषण के लिए पर्याप्त आधार होता है । इसके अतिरिक्त, विधिक रूप से क्रूरता को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ यह आवश्यक नहीं है कि शारीरिक हिंसा का प्रयोग किया जाना चाहिए । निरंतर रूप से पति द्वारा दुर्व्यवहार, वैवाहिक मैथुन का परित्याग और नियोजित रूप से उपेक्षा और उदासीनता और पति द्वारा इस बाबत यह प्रकथन किया जाना कि पत्नी अपवित्र है, वे लक्षण हैं जो क्रूरता या विधिक रूप से क्रूरता को सृजित करते हैं ।

22. शोभारानी **बनाम** मधुकर रेड्डी [(1988) 1 एस. सी. सी. 105] वाले मामले में इस न्यायालय ने मताभिव्यक्ति की कि 'क्रूरता' शब्द 1955 के अधिनियम में परिभाषित किया गया है, किंतु विधानमंडल ने इसको 1955 के अधिनियम की धारा 13(i)(क) के अधीन विवाह-विच्छेद का आधार बनाते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि यदि एक पक्ष का दूसरे पक्ष के साथ आचरण वास्तव में शारीरिक या मानसिक क्रूरता वाला है या यह आचरण विधिक क्रूरता वाला है, तो यह विवाह-विच्छेद प्रदान किए जाने के लिए मात्र एक आधार है । क्रूरता मानसिक या शारीरिक, आशयित या अनाशयित हो सकती है, यदि वह शारीरिक है, तो वह किस मात्रा तक, यह तथ्य का प्रश्न है । यदि वह मानसिक है, तो क्रूरता के व्यवहार की प्रकृति के बाबत जांच आरंभ की जानी चाहिए और तत्पश्चात् इस बाबत जांच की जानी चाहिए कि दूसरे जीवन साथी की मानसिकता पर ऐसे व्यवहार का क्या प्रभाव पड़ा । क्या उस व्यवहार के कारण युक्तिसंगत भय सृजित हुआ, जो एक दूसरे के साथ जीवन यापन के लिए हानिकर या नुकसानदायक हो, के आधार पर अंततः आचरण की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए और शिकायत करने वाले जीवन साथी पर उसके प्रभाव को ध्यान में रखते हुए अनुमान लगाया जाना चाहिए । तथापि, ऐसे भी मामले होते हैं, जिनमें वह आचरण, जिसके संबंध में शिकायत की गई है, अत्यधिक दोषपूर्ण है और अवैध या गैर कानूनी है । तत्पश्चात्, अन्य जीवन साथी पर प्रभाव या हानिकारक प्रभाव के बाबत जांच

किए जाने या विचार किए जाने की आवश्यकता नहीं है । ऐसे मामलों में क्रूरता तब साबित होगी, यदि आचरण स्वयमेव ही साबित हो जाता है या स्वीकार कर लिया जाता है । आशय की अनुपस्थिति के कारण मामले पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए, यदि वह कार्य, जिसके बाबत शिकायत की गई है, को अन्यथा रूप मनुष्यों के मामलों में सामान्य भाव में क्रूरता माना जा सकता है ।

23. वी. भगत **बनाम** डी. भगत (श्रीमती) [(1994) 1 एस. सी. सी. 337] वाले मामले में न्यायालय ने 1955 के अधिनियम की धारा 13(1)(i)(क) के संदर्भ में अभिनिर्धारित किया कि वह कार्य, जो दूसरे पक्ष को मानसिक क्रूरता और पीड़ा कारित करने वाला हो, आचरण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, चूंकि उस आचरण के कारण एक पक्ष के लिए अन्य पक्ष के साथ जीवन यापन असंभव हो जाएगा । अन्य शब्दों में मानसिक क्रूरता ऐसी प्रकृति की होनी चाहिए, जिसके बाबत दोनों पक्ष एक साथ जीवन यापन के दौरान युक्तिसंगत रूप से प्रत्याशा न करे । यह स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि वह पक्ष जिसके साथ दोषपूर्ण कार्य किया गया है, से यह न कहा जा सके कि वह ऐसे आचरण को भूल जाए और दूसरे पक्ष के साथ जीवन यापन करता रहे । इस बात को साबित करना आवश्यक नहीं है कि मानसिक क्रूरता इस प्रकृति की होनी चाहिए, जो अन्य पक्ष के स्वास्थ्य को क्षति कारित करने वाली हो । इस प्रकार के निष्कर्ष पर पहुंचते हुए पक्षों की सामाजिक हैसियत और शैक्षिक स्तर, वह समाज जिसमें वे रहते हैं, उन पक्षों, जो कभी एक साथ जीवन यापन करते थे, के एक साथ रहने की संभाव्यता या अन्यथा, यदि वे एक दूसरे से पृथक् होकर रह रहे है और अन्य समस्त सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए, जिनका विस्तारपूर्वक उल्लेख किया जाना न तो संभव है और न ही वांछित । यह संभव नहीं कि किसी एक मामले में जो क्रूरता हो, दूसरे मामले में क्रूरता न हो । अत: इस तथ्य को प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विनिर्धारित किया जाना चाहिए ।

24. चेतनदास **बनाम** कमला देवी [(2001) 4 एस. सी. सी. 250] वाले मामले में इस न्यायालय ने मताभिव्यक्ति की कि वैवाहिक मामले नाजुक मानवीय और संवेदनशील संबंधों से संबंधित होते हैं । इन संबंधों की अपेक्षा होती है पारस्परिक विश्वास, एक दूसरे के लिए सम्मान, अनुराग और प्रेम और साथ में जीवन साथी के लिए युक्तिसंगत समायोजन और पर्याप्त स्थान । इस प्रकार के संबंधों में सामाजिक नियमों की भी पुष्टि की जानी चाहिए । विवाह-विच्छेद का अनुतोष प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ किसी प्रत्यक्षदर्शी फार्मूले के रूप में 'असुधार्य रूप से टूट चुके विवाह' की संकल्पना को लागू किए जाने की कोई गुंजाइश नहीं है, किंतु इस पर संबद्ध मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में विचार किया जाना चाहिए ।

25. सावित्री पांडे **बनाम** प्रेम चंद पांडे [(2002) एस. सी. सी.773] वाले मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मानसिक क्रूरता एक जीवन साथी का आचरण होता है, जो दूसरे जीवन साथी के प्रति मानसिक पीड़ा या वैवाहिक जीवन के प्रति भय उत्पन्न करता है । क्रूरता विवाह के एक पक्ष के प्रति ऐसे आचरण के द्वारा, जो दूसरे जीवन साथी के मस्तिष्क में ऐसा युक्तिसंगत भय उत्पन्न कर दे कि वह दूसरे जीवन साथी के प्रति हानिकारक और नुकसानदायक हो, किए जाने वाले वर्ताव को अनुध्यात करता है । क्रूरता को पारिवारिक जीवन के सामान्य विवादों से विभेदित किया जाता है ।

27. विनीता सक्सेना **बनाम** पंकज पंडित [(2006) 3 एस. सी. सी. 778] वाले मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि कभी-कभी सामान्य प्रकृति की शिकायतों और उलाहनों को 'क्रूरता' नहीं कहा जा सकता, किंतु समय की लंबी अवधि के दौरान उनकी निरंतरता या उनको निरंतर रूप से किए जाने पर इसे क्रूरता माना जा सकता है, जो प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर होगा और इस पर संबद्ध न्यायालय द्वारा सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए ।

29. समर घोष **बनाम** जया घोष (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि कोई समान स्तरमान अधिकथित नहीं किया जा सकता, किंतु ऐसी परिस्थितियों के कुछ दृष्टांत हैं, जिनमें मानसिक क्रूरता गठित होती है और जिनको यहां पर नीचे स्पष्ट किया गया है –

(i) पक्षों के संपूर्ण वैवाहिक जीवन पर विचारोपरांत अत्यधिक मानसिक दुख, व्यथा और पीड़ा, जिसके कारण दोनों पक्षों का एक दूसरे के साथ जीवन यापन असंभव हो जाएगा, मानसिक क्रूरता के व्यापक प्राचलों के अंतर्गत आएंगे ।

(ii) पक्षों के संपूर्ण वैवाहिक जीवन का विस्तारपूर्वक मूल्यांकन किए जाने पर यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि स्थिति ऐसी है कि अनुचित कार्य करने वाले पक्ष से ऐसा आचरण किए जाने और एक साथ जीवन यापन किए जाने की अपेक्षा युक्तिसंगत रूप से नहीं की जा सकती ।

(iii) मात्र उदासीनता या अनुराग की कमी को क्रूरता का कारण नहीं कहा जा सकता । भाषा की निरंतर अशिष्टता, चिड़चिड़ेपन वाला आचरण, मतभेद और उपेक्षा इस सीमा तक पहुंच सकती है, जिसके कारण दूसरे जीवन साथी का वैवाहिक जीवन पूर्णतया असहनीय हो जाए ।

(iv) मानसिक क्रूरता एक प्रकार की मनोदशा है । एक जीवन साथी में घोर व्यथा, निराशा और कुंठा की भावना, जो दूसरे जीवन साथी के साथ लंबी अवधि के दौरान किए किए आचरण द्वारा कारित हुई हो, के कारण मानसिक क्रूरता कारित हो सकती है ।

(v) अपमानजनक और मानमदर्न के व्यवहार को बढ़ावा देने वाला आचरण, जो दूसरे जीवन साथी को प्रपीड़न, कष्ट पहुंचाने वाला हो या उसके जीवन को दयनीय बनाने वाला हो ।

(vi) किसी एक जीवन साथी के अयुक्तियुक्त आचरण और व्यवहार को बढ़ावा देने वाला आचरण, जो वास्तव में दूसरे जीवन साथी के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाला हो । वह आचरण, जिसकी शिकायत की गई है और उसके परिणामस्वरूप खतरा या भय अत्यंत गंभीर, सारभूत और भारी भरकम होनी चाहिए ।

(vii) निंदनीय आचरण, सुविवेचित उपेक्षा, उदासीनता या लैंगिक संबंध के सामान्य स्तरमान से पूर्णतया प्रस्थान, जिसके कारण दूसरे पक्ष के मानसिक स्वास्थ्य को क्षति कारित होती हो या प्रपीड़नशील आनंद प्राप्त होता हो, भी मानसिक क्रूरता हो सकते हैं ।

(viii) आचरण संताप, स्वार्थपरकता और स्वत्वबोधकता से भी अधिक होना चाहिए, जो निराशा और असंतोष और भावनात्मक दुख को कारित करने वाला हो, मानसिक क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद प्रदान किए जाने का आधार नहीं हो सकता ।

(ix) मात्र तुच्छ चिड़चिड़ापन, वादविवाद और वैवाहिक जीवन में सामान्य गतिरोध, जो दिन प्रतिदिन के जीवन में घटित होते हैं, मानसिक क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद प्रदान किए जाने के लिए पर्याप्त आधार नहीं होंगे ।

(x) वैवाहिक जीवन का पूर्ण रूप से पुनर्विलोकन होना चाहिए और कुछ वर्षों की अवधि के दौरान घटित कुछ अलग-थलग घटनाएं क्रूरता का आधार नहीं हो सकती । दुर्व्यवहार लंबी अवधि, जिसके दौरान संबंध इस सीमा तक निम्न स्तर पर पहुंच गए हैं कि किसी एक जीवन साथी के कार्यों और व्यवहार के कारण दोषपूर्ण व्यवहार का सामना करने वाला पक्ष दूसरे पक्ष के साथ और अधिक अवधि तक जीवन यापन को आत्यंतिक रूप से कठिनाई भरा पाए, मानसिक क्रूरता के आधार हो सकते हैं ।

(xi) यदि पति बिना चिकित्सीय कारणों के बंध्यीकरण की शल्य चिकित्सा कराता है, यदि पति बिना चिकित्सीय कारणों के और अपनी पत्नी की सहमति या ज्ञान के बिना बंध्यीकरण की शल्य चिकित्सा कराता है और इसी प्रकार से यदि पत्नी बिना चिकित्सीय कारणों के या अपने पति की सहमति या ज्ञान के बिना नसबंदी या भ्रूण हत्या की शल्य चिकित्सा कराती है, तो ऐसा करने वाले जीवन साथी का यह कार्य मानसिक क्रूरता माना जाएगा ।

(xii) बिना किसी शारीरिक अक्षमता या विधिमान्य कारण के लंबी अवधि तक मैथुन से इनकार करने का एकपक्षीय विनिश्चय भी मानसिक क्रूरता माना जाएगा ।

(xiii) पति या पत्नी का विवाह के पश्चात् विवाह से संतान उत्पन्न न करने का एकपक्षीय विनिश्चय भी क्रूरता माना जाएगा ।

(xiv) जहां निरंतर पृथक्करण के साथ लंबी अवधि व्यतीत हो चुकी है, तो निष्पक्ष रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वैवाहिक बंधन असुधार्य रूप से टूट चुका है । ऐसी स्थिति में विवाह एक कल्पना हो जाती है, यद्यपि वह विधिक बंधन द्वारा समर्थित होती है । विधि ऐसे मामलों में किसी भी बंधन को समाप्त किए जाने से इनकार किए जाने के द्वारा विवाह की पवित्रता को पूर्ण नहीं करते, बल्कि इसके विपरीत पक्षों की भावनाओं और संवेदनाओं के संबंध में न्यूनतम सम्मान दर्शित होता है । ऐसी परिस्थितियों में इसको मानसिक क्रूरता माना जाएगा ।"

15. हमारे समक्ष उपस्थित मामले में पति स्वयं याची साक्षी-1 के रूप में उपस्थित हुआ था और उसने वही वृत्तांत प्रस्तुत किया था, जैसाकि विवाह-विच्छेद याचिका में अभिकथित किया गया है, किंतु उसने अपने पक्षकथन के समर्थन में कोई अन्य साक्षी या साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था । स्वयमेव कुटुंब न्यायालय ने इस निष्कर्ष को अभिलिखित

किया है कि पति ने पत्नी और उसके परिवार के सदस्यों के विरुद्ध वर्ष 2010 में उसके और उसकी माता के साथ वाद-विवाद के संबंध में कोई शिकायत दर्ज नहीं कराई थी । इसके अतिरिक्त विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने इस बाबत भी अपने निष्कर्ष अभिलिखित किए कि वादी-पति इस बात को साबित कर पाने में विफल रहा कि पत्नी किसी अज्ञात व्यक्ति के साथ टेलीफोन पर बात करती रहती थी । विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने, जहां तक क्रूरता का संबंध है, **कुसुमलता** बनाम **कांता प्रसाद** (उपरोक्त), **नारायण गणेश दस्ताने** बनाम **श्रीमती सुचेतानारायण दस्ताने** (उपरोक्त), **मंजीत कौर** बनाम **अवतार** (उपरोक्त) और **हनुमंत राव** बनाम **शमानी**[1] वाले मामलों में दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया है, किंतु ऐसे किसी भी साक्ष्य पर विचार करने में विफल रहा, जो अपीलार्थी के विरुद्ध किए गए क्रूरता के अभिकथनों को साबित कर सके ।

16. विद्वान् कुटुंब न्यायालय द्वारा विवाह-विच्छेद याचिका इस आधार पर डिक्री कर दी गई थी कि पत्नी का व्यवहार एक आदर्श स्त्री का नहीं था, वह अपने माता-पिता के घर पर रहा करती थी, उसके परिवार के सदस्यों से लड़ाई-झगड़ा करती थी और साथ ही पति के विरुद्ध असत्य आरोप लगाया करती थी, जो पत्नी द्वारा क्रूरता माना जाएगा ।

17. हमने कुटुंब न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का परिशीलन किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि विद्वान् निचला न्यायालय इस बात पर विचार करने में विफल रहा कि प्रतिवादी-अपीलार्थी का प्रपीड़न वादी-प्रत्यर्थी और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा दहेज के लिए किया जा रहा था जिसके अनुसरण में पत्नी द्वारा एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी और साक्ष्य के परिशीलन से यह स्पष्ट होता है कि पत्नी सदैव पति के साथ निवास के लिए इच्छुक थी और वर्तमान में भी है और उसकी उसके पति द्वारा उपेक्षा की गई थी और उसका परित्याग कर दिया गया था । यह सुस्थापित विधि है कि कोई भी पक्ष अपने स्वयं के द्वारा किए गए दोषपूर्ण कार्यों का लाभ नहीं ले सकता । पत्नी

[1] ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 1318.

के परिवार के सदस्यों द्वारा लड़ाई-झगड़े के संबंध में किए गए अभिकथनों पर कुटुंब न्यायालय द्वारा निर्णय के पैरा 9 में पहले ही अविश्वास किया जा चुका है और इसके अतिरिक्त दोनों पक्षों द्वारा एक दूसरे के विरुद्ध लगाए गए व्यभिचार के आरोपों पर निचले न्यायालय द्वारा अविश्वास किया गया, किंतु फिर भी अभिलेख पर बिना किसी तर्कपूर्ण साक्ष्य के विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित कर दी गई । विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने इस आधार पर भी विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान की कि पत्नी ने पति का परित्याग कर दिया था और अपने माता-पिता के घर निवास करने लगी थी, किंतु वे पत्नी द्वारा दहेज के कारण प्रपीड़न किए जाने और अपने पति के साथ जीवन यापन की उसकी इच्छा के संबंध में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विचार करने में असफल रहे ।

18. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि अपीलार्थी-पत्नी अपनी स्वयं की स्वतंत्र इच्छा के कारण पृथक् रूप से जीवन यापन नहीं कर रही है । प्रतिवादी-अपीलार्थी वादी-प्रत्यर्थी के साथ जीवन यापन के लिए सदैव तत्पर थी और वर्तमान में भी है । प्रतिवादी-अपीलार्थी ने स्वयमेव ही वादी-प्रत्यर्थी का परित्याग नहीं किया । वादी-प्रत्यर्थी इस बात को साबित कर पाने में विफल रहा है कि प्रतिवादी-अपीलार्थी ने उसके साथ क्रूरता कारित की थी या बिना किसी पर्याप्त कारण के उसका परित्याग कर दिया था ।

19. पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए यह अपील मंजूर किए जाने योग्य है । तद्नुसार, अपील मंजूर की जाती है और हापुड़ के कुटुंब न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश द्वारा तारीख 25 मार्च, 2017 को पारित निर्णय और डिक्री को अपास्त किया जाता है और वादी द्वारा फाइल किए गए विवाह-विच्छेद वाद को खारिज किया जाता है ।

20. लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जाता ।

अपील मंजूर की गई ।

शु.

एस. एस. कंपनी (मैसर्स) और एक अन्य

बनाम

जिला मजिस्ट्रेट/कलेक्टर, बिजनौर और अन्य

[2020 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 17081]

तारीख 31 अक्तूबर, 2020

न्यायमूर्ति नाहीद आरा मूनिस और न्यायमूर्ति विवेक वर्मा

प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूत हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54) – धारा 13(4), 14 और 17 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 226] – प्रतिभूत हित का प्रवर्तन – मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिभूत लेनदार की प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने में सहायता प्रदान करना – प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रतिभूत हित के प्रवर्तन के विरुद्ध अपील – उच्च न्यायालयों द्वारा ऐसे अनेक मामलों पर विचार किया जाना निरंतर जारी है, जो 2002 के प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूत हित का प्रवर्तन अधिनियम के अंतर्गत उद्भूत होते हैं और जिनमें विचार किए जाने और अंतरिम आदेश पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ ऋण वसूली अधिकरण सक्षम हैं – अतः आनुकल्पिक अनुतोष की उपलब्धता के लिए सक्षम फोरम विद्यमान होने के कारण उच्च न्यायालय को अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी असाधारण अधिकारिता का प्रयोग नहीं करना चाहिए ।

प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूत हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 – धारा 13(4), 14 और 17 – प्रतिभूत हित का प्रवर्तन – न्यायालय का यह पवित्र कर्तव्य है कि वह इस बात को सुनिश्चित करे कि लोक धन, जिसे वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋणी को ऋणस्वरूप प्रदान किया जाता है, का दुरुपयोग या दुर्विनियोग न हो – न्यायालय को ऋण का लाभ प्राप्त करने वालों और उसके

पुनर्संदाय के अनिच्छुक लोगों के पक्ष में अनुचित सहानुभूति दर्शित नहीं करनी चाहिए ।

प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूत हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 – धारा 13(4), 14 और 17 – प्रतिभूत हित का प्रवर्तन – उधार लेने वालों के लिए ऋण के पुनर्संदाय में विलंब के वास्तविक कारण हो सकते हैं, किंतु ऐसे मामलों को समुचित फोरमों, जिन्हें ऐसे मामलों पर विचार किए जाने के लिए सृजित किया गया है, द्‌वारा संबोधित किया जाना चाहिए और इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब नहीं लिया जाना चाहिए ।

याचियों ने वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से 2002 के प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 14 के अधीन बिजनौर के जिला मजिस्ट्रेट द्‌वारा तारीख 5 मार्च, 2020 को पारित आदेश को चुनौती दी है । उपरोक्त अधिनियम की धारा 14 के अधीन की गई कार्यवाही इस अधिनियम की धारा 13(4) के अधीन पारिणामिक कार्यवाही है । अधिनियम की धारा 14 प्रतिभूत लेनदार को संपत्ति का कब्जा हस्तगत किए जाने के लिए अनुध्यात करती है और यदि याची संपत्ति का कब्जा हस्तगत किए जाने के प्रयोजनार्थ पारित आदेश से व्यथित हैं, तो वह अधिनियम की धारा 17 के अधीन अपील फाइल करने के द्‌वारा ऋण वसूली अधिकरण की शरण ले सकता है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया बनाम सत्यवादी टंडण और अन्य वाले मामले में मताभिव्यक्ति की कि "यदि प्रत्यर्थी संख्या 1 को धारा 13(4) के अधीन जारी की गई सूचना या धारा 14 के अधीन की गई कार्रवाई के विरुद्ध प्रत्यक्ष रूप से कोई शिकायत थी, तो वह धारा 17(1) के अधीन आवेदन फाइल किए जाने के द्‌वारा अनुतोष प्राप्त कर सकता था । धारा 17(1) में प्रयुक्त 'कोई व्यक्ति' अभिव्यक्ति अत्यधिक व्यापक अर्थान्वयन वाली अभिव्यक्ति है । इसकी परिधि के अंतर्गत न केवल उधार लेने वाला आता है, बल्कि वह प्रत्याभूतिदाता और कोई अन्य व्यक्ति भी आता है, जो धारा 13(4) या धारा 14 के अधीन की गई

कार्रवाई द्वारा प्रभावित हो । ऋण वसूली अधिकरण और ऋण वसूली अपीली अधिकरण, दोनों धारा 17 और 18 के अधीन अंतरिम आदेश पारित करने के लिए सशक्त हैं और उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे निर्धारित समयावधि के भीतर इन मामलों को निर्णीत करें । अत: यह स्पष्ट है कि सरफेसी अधिनियम के अधीन किसी व्यथित व्यक्ति को उपलब्ध अनुतोष त्वरित और प्रभावी, दोनों हैं । दुर्भाग्यवश, उच्च न्यायालय ने इस स्थिरीकृत विधि का अनदेखा किया कि उच्च न्यायालय सामान्यत: संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई किसी ऐसी याचिका पर विचार नहीं करना चाहिए और यदि व्यथित व्यक्ति को कोई प्रभावी अनुतोष पहले से उपलब्ध है और यह नियम उन मामलों में बृहत्तर कठोरता के साथ लागू होता है, जिनमें करों, उपकरों, शुल्कों, अन्य प्रकार के लोक धन और बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं के देय अंतर्वलित होते हैं, तो हमारे विचार में उच्च न्यायालय को लोक देयों, इत्यादि की वसूली के लिए आरंभ की गई किसी कार्रवाई को दी गई चुनौती को अंतर्वलित करने वाली याचिकाओं पर विचार करते हुए इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि इस प्रकार के देयों की वसूली के लिए संसद् और राज्य विधानमंडलों द्वारा अधिनियमित विधान स्वयमेव में संहिता होते हैं, चूंकि उनमें देयों की वसूली के लिए न केवल विस्तारपूर्वक प्रक्रिया समाविष्ट होती है, बल्कि व्यथित व्यक्ति की शिकायत के निस्तारण के लिए अर्ध न्यायिक निकायों का गठन भी परिकल्पित होता है । इसलिए, ऐसे समस्त मामलों में उच्च न्यायालय को इस बात पर जोर देना चाहिए कि किसी भी व्यथित व्यक्ति को संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष प्राप्त करने के पूर्व सुसंगत कानून के अंतर्गत उपलब्ध अनुतोषों को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए । हम पूर्वोक्त विचार व्यक्त करते हुए इस तथ्य के प्रति जागरूक हैं कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय को किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को समुचित मामलों में किसी सरकार को सम्मिलित करते हुए भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी अधिकार के प्रवर्तन के लिए या किसी अन्य प्रयोजन के लिए पांच विवेकाधिकार रिटें जारी किए जाने को सम्मिलित करते हुए निर्देश,

आदेश या रिटें जारी करने की प्रदत्त शक्तियां अत्यंत व्यापक हैं और इस शक्ति के प्रयोग पर अभिव्यक्त रूप से कोई परिसीमा अधिरोपित नहीं की गई है, किंतु तत्समय हम इस न्यायालय द्वारा आत्म अधिरोपित नियंत्रण के नियम, जिसका पालन करने के लिए प्रत्येक उच्च न्यायालय, जब वह संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करता है, बाध्य है, के प्रति विस्मरणसील नहीं हो सकते" । तद्नुसार, रिट याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – माननीय उच्चतम न्यायालय ने 2018 की सिविल अपील संख्या 10243-10250, आई. सी. आई. सी. आई. बैंक लिमिटेड बनाम उमाकांत मोहापात्रा वाले मामले में तारीख 5 अक्तूबर, 2018 को पारित किए गए नवीनतम निर्णय में सरफेसी अधिनियम से उद्भूत होने वाले मामलों के संदर्भ में अंतरिम आदेश प्रदान किए जाने की प्रथा का अनुमोदन किया है और यह अभिनिर्धारित किया है, "उच्च न्यायालय माननीय न्यायमूर्ति नवीन सिन्हा द्वारा प्राधिकृत अधिकारी, स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर और एक अन्य बनाम वी. एस. मैथ्यू के. सी. [(2018) 3 एस. सी. सी. 85] वाले मामले में तारीख 30 जनवरी, 2018 को नवीनतम रूप से पारित निर्णय को सम्मिलित करते हुए इस न्यायालय द्वारा पारित किए गए अनेक निर्णयों के बावजूद ऐसे मामलों पर विचार करना जारी रखे हुए हैं, जो 2002 के प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम (सरफेसी अधिनियम) के अंतर्गत उद्भूत होते हैं और उन व्यक्तियों के पक्ष में अंतरिम आदेश जारी करते रहते हैं, जो गैर निष्पादनीय आस्ति हैं । नवीनतम निर्णय, जिसे इस न्यायालय के पूर्ववर्ती निर्णयों का अनुसरण करते हुए पारित किया गया, को ध्यान में रखते हुए रिट याचिका पोषणीय नहीं है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया, "हम कोई सहायता नहीं कर सकते किंतु उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण का अननुमोदन द्वारिकेश शुगर इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम प्रेम हैवी इंजीनियरिंग वर्कस (प्राइवेट) लिमिटेड और एक अन्य [(1997) 6 एस. सी. सी. 450] वाले मामले में पहले से उल्लिखित कारणोंवश करते हैं, जिसमें यह मताभिव्यक्ति की गई, जब विधि की दृष्टि में स्थिति इस

न्यायालय की न्यायिक उद्‌घोषणा के परिणामस्वरूप सुस्थिरीकृत हो जाती है, तो इसका अर्थ स्थिरीकृत विनिश्चयों का अनदेखा किए जाने और तत्पश्चात् कोई ऐसा न्यायिक आदेश पारित किए जाने, जो स्पष्टत: स्थिरीकृत विधिक स्थिति के विपरीत है, के प्रयोजनार्थ उच्च न्यायालयों को सम्मिलित करते हुए अधीनस्थ न्यायालयों द्‌वारा न्यायिक अनौचित्य होगा । इस प्रकार की न्यायिक सक्रियता की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती और हम स्थिरीकृत सिद्धांतों को लागू न किए जाने और सनक से परिपूर्ण आदेशों को पारित किए जाने, जो दोनों में से किसी एक पक्ष को दोषपूर्ण और अनपेक्षित अनुतोष प्रदान किए जाने का प्रभाव रखते हैं, की अधीनस्थ न्यायालयों की प्रवृत्ति की दृढ़तापूर्वक निंदा करते हैं । अभी भी समय है कि इस प्रवृत्ति पर रोक लगाई जाए । इस मामले में रिट याचिका के पोषणीय न होने के कारण प्रकटत: आक्षेपित आदेश को सम्मिलित करते हुए समस्त आदेश दोषपूर्ण हैं, जिनको अपास्त किया जाता है ।" माननीय उच्चतम न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णयों का अनुसरण करते हुए इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने 2019 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 14645, सुषमा यादव और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य वाले मामले में तारीख 15 मई, 2019 को यह निर्णय पारित किया, "न्यायालय का यह पवित्र कर्तव्य है कि वह इस बात को सुनिश्चित करे कि लोक धन, जिसे वित्तीय संस्थाओं द्‌वारा उधार स्वरूप दिया गया है, के संबंध में विचार करते हुए जनता द्‌वारा उसमें व्यक्त किया गया विश्वास बना रहे और लोक धन का दुरुपयोग या दुर्विनियोग न हो । यह न्यायालय का कार्य नहीं है कि वह उधार स्वरूप प्रदान किए गए लोक धन को उधारदान के रूप में प्रतीत करे या उधार लेने वालों, जिन्होंने ऋण की सुविधा का लाभ लिया है और उसका पुनर्संदाय करने में अनिच्छुक है, के पक्ष में अनुचित सहानुभूति दर्शित करे । कभी-कभी उधार लेने वालों के लिए भी संदाय में विलंब के वास्तविक कारण हो सकते हैं, किंतु इस प्रकार के मामलों को समुचित फोरमों, जिन्हें इस प्रकार के मामलों पर विचार किए जाने के लिए सृजित किया गया है, द्‌वारा संबोधित किया जाना चाहिए । ऐसे मामलों में इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब नहीं लिया जाना चाहिए ।" (पैरा 9 और 10)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	2019 (9) ए. डी. जे. 102 (डी. बी.) : **सुषमा यादव और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	10
[2018]	(2018) 3 एस. सी. सी. 85 : **स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर और एक अन्य** बनाम **मैथ्यू के. सी.** ;	8
[2013]	(2013) 10 एस. सी. सी. 83 : **महाप्रबंधक, श्री सिद्धेश्वरा कोआपरेटिव बैंक लिमिटेड और एक अन्य** बनाम **श्री इकबाल और अन्य** ;	7
[2013]	(2013) 9 एस. सी. सी. 620 : **स्टेंडर्ड चार्टर्ड बैंक** बनाम **नोबल कुमार और अन्य** ;	6
[2011]	(2011) 2 एस. सी. सी. 782 : **कन्हैया लाल चंद्र सचदेव और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य** ;	5
[2010]	(2010) 8 एस. सी. सी. 110 : **यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **सत्यवादी टंडन और अन्य** ।	4

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2020 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 17081.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री मोहम्मद अफज़ल

प्रत्यर्थी की ओर से मुख्य स्थायी काउंसेल और श्रीमती सुधा पांडे

आदेश

याची की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल श्री मोहम्मद अफज़ल,

प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3 की ओर से उपस्थित विद्वान् स्थायी काउंसेल और प्रत्यर्थी संख्या 4 की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल सुश्री सुधा पांडेय को सुना ।

2. याचियों ने वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से 2002 के प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'सरफेसी अधिनियम' कहा गया है) की धारा 14 के अधीन बिजनौर के जिला मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 5 मार्च, 2020 को पारित आदेश को चुनौती दी है ।

3. उपरोक्त अधिनियम की धारा 14 के अधीन की गई कार्यवाही इस अधिनियम की धारा 13(4) के अधीन पारिणामिक कार्यवाही है । अधिनियम की धारा 14 प्रतिभूत लेनदार को संपत्ति का कब्जा हस्तगत किए जाने के लिए अनुध्यात करती है । यदि याची पूर्वोक्त आदेश से व्यथित हैं, तो वे अधिनियम की धारा 17 के अधीन अपील फाइल करने के द्वारा ऋण वसूली अधिकरण की शरण ले सकते हैं ।

4. अब यह विषय अनिर्णीत विषय नहीं रह गया है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने **यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **सत्यवादी टंडन और अन्य**[1] वाले मामले में यह मताभिव्यक्ति की है :-

> "42. इस बात का एक अन्य कारण भी है जिसको ध्यान में रखते हुए आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाना चाहिए । यदि प्रत्यर्थी संख्या 1 को धारा 13(4) के अधीन जारी की गई सूचना या धारा 14 के अधीन की गई कार्रवाई के विरुद्ध प्रत्यक्ष रूप से कोई शिकायत थी, तो वह धारा 17(1) के अधीन आवेदन फाइल किए जाने के द्वारा अनुतोष प्राप्त कर सकती थी । धारा 17(1) में प्रयुक्त 'कोई व्यक्ति' अभिव्यक्ति अत्यधिक व्यापक अर्थान्वयन वाली अभिव्यक्ति है । इसकी परिधि के अंतर्गत न केवल उधार लेने वाला आता है, बल्कि वह प्रत्याभूतिदाता और कोई अन्य व्यक्ति भी आता, जो धारा 13(4) या धारा 14 के अधीन की गई

[1] (2010) 8 एस. सी. सी. 110.

कार्रवाई द्वारा प्रभावित हो । अधिकरण और अपीली अधिकरण, दोनों धारा 17 और 18 के अधीन अंतरिम आदेश पारित करने के लिए सशक्त हैं और उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे निर्धारित समयावधि के भीतर इन मामलों को निर्णीत कर दें । अतः यह स्पष्ट है कि सरफेसी अधिनियम के अधीन किसी व्यथित व्यक्ति को उपलब्ध अनुतोष त्वरित और प्रभावी, दोनों हैं ।

43. दुर्भाग्यवश, उच्च न्यायालय ने इस स्थिरीकृत विधि का अनदेखा किया कि उच्च न्यायालय सामान्यतः संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई किसी ऐसी याचिका पर विचार नहीं करेगा, यदि व्यथित व्यक्ति को कोई प्रभावी अनुतोष पहले से उपलब्ध है और यह नियम उन मामलों में बृहत्तर कठोरता के साथ लागू होता, जिनमें करों, उप करों, शुल्कों, अन्य प्रकार के लोक धनी और बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं के देय अंतर्वलित होते हैं । हमारे विचार में उच्च न्यायालय को लोक देयों, इत्यादि की वसूली के लिए आरंभ की गई किसी कार्रवाई को दी गई चुनौती को अंतर्वलित करने वाला याचिकाओं पर विचार करते हुए इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि इस प्रकार के देयों की वसूली के लिए संसद् और राज्य विधानमंडलों द्वारा अधिनियमित विधान स्वयमेव में संहिता होते हैं, चूंकि उनमें देयों की वसूली के लिए न केवल विस्तारपूर्वक प्रक्रिया समाविष्ट होती है, बल्कि उनमें किसी व्यथित व्यक्ति की शिकायत के निस्तारण के लिए अर्ध न्यायिक निकायों का गठन भी परिकल्पित होता है । इसलिए, ऐसे समस्त मामलों में, उच्च न्यायालय को इस बात पर जोर देना चाहिए कि किसी व्यक्ति को इसके पहले कि वह संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष प्राप्त करने के पूर्व सुसंगत कानून के अंतर्गत उपलब्ध अनुतोषों को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए ।

44. हम पूर्वोक्त विचार वयक्त करते हुए इस तथ्य के प्रति जागरूक हैं कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय को किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को समुचित मामलों में

किसी सरकार को सम्मिलित करते हुए भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी अधिकार के प्रवर्तन के लिए या किसी अन्य प्रयोजन के लिए पांच विवेकाधिकार रिटें जारी किए जाने को सम्मिलित करते हुए निर्देश, आदेश या रिटें जारी करने के लिए प्रदत्त शक्तियां अत्यंत व्यापक हैं और इस शक्ति के प्रयोग पर अभिव्यक्त रूप से कोई परिसीमा अधिरोपित नहीं की गई है, किंतु तत्समय हम इस न्यायालय द्वारा आत्म अधिरोपित नियंत्रण के नियम, जिसका पालन करने के लिए प्रत्येक उच्च न्यायालय, जब वह संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करता है, बाध्य है, के प्रति विस्मरणसील नहीं हो सकते ।

45. यह सत्य है कि वैकल्पिक अनुतोष प्राप्त करने का नियम वैवेकिक नियम है और इस नियम का पालन न केवल अनिवार्य है बल्कि इस बाबत कोई भी कारण दर्शित किया जाना कठिन है कि उच्च न्यायालय को इस तथ्य का अनदेखा करते हुए कि जब याची किसी विशिष्ट विधान के अंतर्गत आवेदन, अपील, पुनरीक्षण इत्यादि फाइल करने के द्वारा प्रभावी वैकल्पिक अनुतोष प्राप्त कर सकता है और उस विशिष्ट विधान में उसकी शिकायत के निस्तारण के लिए विस्तारपूर्वक तंत्र समाविष्ट है, तो संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई याचिका पर विचार क्यों किया जाना चाहिए और उस पर अंतरिम आदेश पारित क्यों किया जाना चाहिए ।

*** *** ***

55. यह गंभीर चिंता का विषय है कि इस न्यायालय द्वारा बारंबार निर्णय पारित किए जाने के बावजूद उच्च न्यायालय बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को शोध्य ऋण वसूली अधिनियम और सरफेसी अधिनियम के अंतर्गत उपलब्ध कानूनी अनुतोषों की उपलब्धता का अनदेखा कर रहे हैं और अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग आदेश पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ कर रहे हैं, जो बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा उनके देयों को वसूली के अधिकारों पर गंभीर रूप से प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं ।

हम आशा करते हैं और हमको विश्वास है कि भविष्य में उच्च न्यायालय ऐसे मामलों में अपने इस विवेकाधिकार का प्रयोग अत्यधिक सावधानी और सतर्कता के साथ करेंगे ।

56. जहां तक इस मामले का संबंध है, हम इस बाबत जागरूक हैं कि उच्च न्यायालय अपीलार्थी के विरुद्ध सरफेसी अधिनियम की धारा 13(4) के अधीन जारी की गई सूचना के मतावलंबन में कार्रवाई करते हुए व्यादेश का आदेश पारित करने में कतई न्यायसंगत नहीं था । परिणामस्वरूप, यह अपील मंजूर की जाती है और आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है । चूंकि प्रत्यर्थी इस अपील का प्रतिवाद करने के लिए उपस्थित नहीं हुआ, इसलिए लागत के संबंध में कोई आदेश पारित नहीं किया जा रहा ।"

5. **कन्हैया लाल चंद्र सचदेव और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

"24. सिटी एंड इंडस्ट्रीयल डवलपमेंट कारपोरेशन **बनाम** दोसू अर्देसिर भिवंडीवाला और अन्य [(2009) 1 एस. सी. सी. 168] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मताभिव्यक्ति की –

'30. न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए इस बात पर विचार करने के कर्तव्य द्वारा बाध्य है कि क्या –

(क) रिट याचिका के न्यायनिर्णयन में तथ्यों के जटिल और विवादित प्रश्न अंतर्वलित होते हैं और क्या उनका संतोषप्रद तरीके से निस्तारण किया जा सकता है ;

(ख) याचिका में समस्त तात्विक तथ्यों का प्रकटीकरण किया गया है ;

(ग) याची के पास विवाद के समाधान के लिए कोई आनुकल्पिक या प्रभावी अनुतोष उपलब्ध है ;

---

[1] (2011) 2 एस. सी. सी. 782.

(घ) अधिकारिता का अवलंब लेने वाला व्यक्ति बिना किसी स्पष्टीकरण के विलंब और चूकों का दोषी है ;

(ङ) याचिका परिसीमा की किसी विधि द्वारा प्रत्यक्षत: बाधित है ;

(च) अनुतोष प्रदान किया जाना लोक नीति के विरुद्ध है या किसी विधिमान्य विधि द्वारा बाधित है ; और इसी प्रकार के अन्य बहुत से कारक ।'

25. हमारे समक्ष उपस्थित मामले में इस तथ्य के अलावा कि स्वीकृत रूप से तथ्य के कतिपय विवादित प्रश्न अर्थात् अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन सूचना की प्राप्ति, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश की संसूचना का प्राप्त न होना, इत्यादि अंतर्वलित होते हैं, अत: अधिनियम की धारा 17 के अधीन अपील का प्रभावी कानूनी अनुतोष भी अपीलार्थियों, जो अंतत: उसको प्राप्त करते हैं, को उपलब्ध होगा । इसलिए, उच्च न्यायालय मामले में उद्भूत होने वाले तथ्यों को ध्यान में रखते हुए संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग करने से इनकार करने में पूर्णतया न्यायसंगत था ।"

6. पुन:, **स्टेंडर्ड चार्टर्ड बैंक** बनाम **नोबल कुमार और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :-

"27. धारा 17 के अधीन 'अपील' का अनुतोष उधार लेने वाले को धारा 13(4) के अधीन की गई किसी कार्रवाई के विरुद्ध उधार उपलब्ध होता है । प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लिया जाना अनेक उपायों में से मात्र एक उपाय है, जिसका आश्रय प्रतिभूत लेनदार द्वारा लिया जा सकता है । प्रतिभूत आस्ति की प्रकृति और प्रतिभूति के करार के निबंधनों और शर्तों पर निर्भर रहते हुए प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लिए जाने के अलावा अन्य उपाय भी

[1] (2013) 9 एस. सी. सी. 620.

धारा 13(4) के अधीन संभव हैं । पट्टा या विक्रय द्वारा आस्ति का अन्य संक्रामण और प्रतिभूत आस्ति के प्रबंध के लिए किसी व्यक्ति की नियुक्ति अनेक उपायों में से कुछ संभव उपाय हैं । इसके विपरीत धारा 14 मजिस्ट्रेट को संपत्ति का केवल कब्जा लेने और उस आस्ति को संबद्ध दस्तावेजों के साथ उधार लेने वाले (अर्थात् प्रतिभूत लेनदार) को अग्रेषित करने के लिए सशक्त करती है । इसलिए उधार लेने वाला प्रतिभूत लेनदार को प्रतिभूत आस्ति का कब्जा हस्तगत किए जाने के पश्चात् धारा 17 के अधीन 'अपील' फाइल करने का हकदार होता है । इस धारा में यह कहीं पर विनिर्दिष्ट नहीं किया गया है कि क्या इस प्रकार से प्रदान किया गया कब्जा प्रत्यक्षत: या धारा 14 के अधीन विहित प्रक्रिया का आश्रय लिए जाने के द्वारा प्रतिभूत लेनदार द्वारा अभिप्राप्त किया जाना चाहिए । हमारा यह विचार है कि प्रतिभूत लेनदार किसी भी प्रकार से कब्जा अभिप्राप्त करता है, चाहे वह धारा 14 के अधीन अनुध्यात प्रक्रिया के द्वारा हो या ऐसी किसी प्रक्रिया का आश्रय लिए जाए बिना, प्रतिभूत आस्ति का कब्जा सदैव एक ऐसा उपाय होता है, जिसके विरुद्ध धारा 17 के अधीन अनुतोष उपलब्ध होता है ।"

7. **महाप्रबंधक, श्री सिद्धेश्वरा कोआपरेटिव बैंक लिमिटेड और एक अन्य** बनाम **इकबाल और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मताभिव्यक्ति की कि यद्यपि अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण अधिकारिता के प्रयोजनार्थ आनुकल्पिक अनुतोष की उपलब्धता आत्यंतिक वर्जन नहीं होती, फिर भी यह सुस्थापित विधि है कि जहां कोई कानून किसी प्रभावी और पर्याप्त अनुतोष के लिए उपबंधित करता है, तो उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन उस याचिका पर विचार न करने में न्यायसंगत होगा । किसी अनुचित विचार पर आधारित कानूनी प्रक्रिया को धोखा दिए जाने के प्रयोजनार्थ मंजूरी प्रदान नहीं की जा सकती ।

---

[1] (2013) 10 एस. सी. सी. 83.

8. जहां तक वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋण की वसूली के मामलों में रिट अधिकारिता का अवलंब लिए जाने का संबंध है, माननीय उच्चतम न्यायालय ने प्राधिकृत अधिकारी, **स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर और एक अन्य** बनाम **मैथ्यू के. सी.**[1] वाले मामले में इस संबंध में पूर्ववर्ती निर्णयज विधियों पर विचारोपरांत यह अभिनिर्धारित किया :-

"16. यह न्यायालय का पवित्र कर्तव्य है कि वह किसी पक्ष द्वारा कोई आक्षेप उठाए जाने की प्रतीक्षा किए बिना शुद्ध विधि को लागू करे, विशेष रूप से जब विधि पूर्णत: स्थिरीकृत हो चुकी हो । कोई भी विचलन, यदि अनुज्ञेय हो, सुविवेचित कारणोंवश होना चाहिए । यदि मामला सुपरिभाषित अपवादों के अंतर्गत आने वाला हो और उस पर सुसंगत विधि का उल्लेख किए जाने के पश्चात् सम्यक् रूप से विचार-विमर्श किया गया हो । वित्तीय मामलों में एकपक्षीय रूप से अंतरिम आदेश प्रदान किए जाने के हानिकारक प्रभाव हो सकते हैं और यह कहा जाना पर्याप्त नहीं होगा कि व्यथित पक्ष को उस अंतरिम आदेश को रिक्त कराए जाने के लिए सक्षम न्यायालय की शरण में जाने का अनुतोष प्राप्त है । वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋण लोक धन से प्रदान किए जाते हैं, जिनको करदाताओं द्वारा दिए गए करों से संगृहीत किया जाता है । इस प्रकार के ऋण उस व्यक्ति की संपत्ति नहीं हो जाते, जो ऋण लेता है, बल्कि इस प्रकार के ऋणों का लोक धन का लक्षण बना रहता है, जो जनता द्वारा सौंपी गई न्यासी की हैसियत में प्रदान किए जाते हैं । इस प्रकार के ऋण का समय से पुनर्संदाय धन के परिचालन द्वारा तरलता को भी सुनिश्चित करता है ताकि किसी अन्य व्यक्ति को ऋण प्रदान किया जा सके, जिसको उसकी आवश्यकता है और इस प्रकार के धन के मार्ग में ऐसे लोगों, जो उसका सुखभोग करते हैं, जो तुच्छ मुकदमेबाजी करते हैं, को रुकावट खड़ी करने की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती । यहां पर जो सावधानी अपेक्षित हैं, उसे **सत्यवती टंडन** (उपरोक्त) वाले मामले में व्यक्त किया गया है और कोई भी आक्षेपित अंतरिम

---

[1] (2018) 3 एस. सी. सी. 85.

आदेश पारित किए जाने के पूर्व हमको उस सावधानी को भी ध्यान में रखना चाहिए –

> '46. इस बात को याद रखा जाना चाहिए कि राज्य और/या उसके अभिकरणों द्वारा करों, उपकरों, शुल्कों इत्यादि की वसूली के लिए आरंभ की गई किसी भी कार्यवाही का स्थगन लोक महत्व की परियोजनाओं के निष्पादन को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं और उनको जनता के प्रति उनकी संवैधानिक और विधिक बाध्यताओं का निर्वहन करने में असमर्थ बना देते हैं । बैंकों, वित्तीय संस्थाएं और प्रतिभूत लेनदारों के देयों की वसूली से संबंधित मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा प्रदान किए गए स्थगनादेशों के कारण इन निकायों/संस्थाओं के वित्तीय स्वास्थ्य पर गंभीर रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जो अंततः राष्ट्र की अर्थव्यवस्था के प्रतिकूल साबित होता है/होगा । इसलिए, उच्च न्यायालय को ऐसे मामलों में स्थगनादेश प्रदान करने के अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए अत्यंत सावधान और सतर्क रहना चाहिए । निश्चित रूप से, यदि याची यह दर्शित करने के समर्थ होता है कि उसका मामला बाबूराम प्रकाश चंद्र महेश्वरी **बनाम** अंतरिम जिला परिषद् [ए. आई. आर. 1969 एस. सी. 556], व्हिर्लपूल कारपोरेशन **बनाम** पण्याचिह्न रजिस्ट्रार [(1998) 8 एस. सी. सी. 1] और हरबंसलाल साहनिया **बनाम** इंडियन ऑयल कारपोरेशन लिमिटेड [(2003) 2 एस. सी. सी. 107] और कुछ अन्य निर्णयों में सृजित अपवादों में से किसी भी अपवाद के अंतर्गत आता है, तो उच्च न्यायालय समस्त सुसंगत प्राचलों और लोकहित पर विचारोपरांत समुचित अंतरिम आदेश पारित करेगा ।'

17. इस रिट याचिका पर बिना कोई विशेष कारण समनुदेशित किए मात्र याची की ईप्सा के आधार पर अंतरिम आदेश पारित किया जाना और वह भी अपीलार्थी को रिट याचिका की पोषणीयता का प्रतिवाद करने का अवसर प्रदान किए बिना और इस दौरान हुई

पश्चात्वर्ती प्रगति को अवेक्षित किए जाने के कारण विचार नहीं किया जाना चाहिए था । खंड न्यायपीठ द्वारा व्यक्त किया गया विचार कि चूंकि खंडन शपथ-पत्र बाद में फाइल किया गया था, इसलिए अंतरिम आदेश में स्थगन/उपांतरण की ईप्सा नहीं की जा सकती थी और इसको मध्यक्षेप किए जाने से इनकार किए जाने का पर्याप्त न्यायोचित्य नहीं माना जा सकता था ।

18. हम इसमें कोई सहायता नहीं कर सकते, किंतु **द्वारिकेश शुगर इंडस्ट्रीज लिमिटेड** बनाम **प्रेम हैवी इंजीनियरिंग वर्क (प्राइवेट) लिमिटेड और एक अन्य** [(1997) 6 एस. सी. सी. 450] वाले मामले में पहले ही उल्लिखित कारणोंवश उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण का यह मताभिव्यक्ति करते हुए अननुमोदन करते हैं कि –

> "32. जब विधि की कोई स्थिति इस न्यायालय की न्यायिक उद्घोषणाओं के परिणामस्वरूप सुस्थापित हो जाती है, तो उच्च न्यायालयों को सम्मिलित करते हुए अधीनस्थ न्यायालयों के लिए भी स्थिरीकृत विनिश्चयों का अनदेखा किया जाना और तत्पश्चात् कोई ऐसा न्यायिक आदेश पारित किया जाना, जो स्पष्टतः स्थिरीकृत विधिक स्थिति के विपरीत हो, न्यायिक अनौचित्य होगा । इस प्रकार की न्यायिक सक्रियता को अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती और हम स्थिरीकृत सिद्धांतों को लागू न किए जाने और ऐसे सनक वाले आदेश, जिनको पारित किए जाने से अनावश्यक रूप से दोनों पक्षों में से किसी एक पक्ष के दोषपूर्ण और अनपेक्षित अनुतोष प्रदान किया जा सकता है, के मामले में अधीनस्थ न्यायालयों की इस प्रवृत्ति की घोर शब्दों में निन्दा करते हैं । अभी भी समय है कि इस प्रवृत्ति पर रोक लगाई जाए ।"

19. इसलिए, आक्षेपित आदेश इस न्यायालय द्वारा संविधान के अनुच्छेद 141 के अधीन अभिकथित विधि के विपरीत हैं और मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है । इसलिए, उनको अपास्त किया जाता है और इस अपील को मंजूर किया जाता है ।

20. विधि और तथ्य के समस्त प्रश्नों पर सरफेसी अधिनियम के अधीन किसी कानूनी फोरम के समक्ष किसी व्यथित पक्ष द्वारा फाइल किए गए किसी आवेदन पर विचार किया जा सकता है ।"

9. माननीय उच्चतम न्यायालय ने 2018 की सिविल अपील संख्या 10243-10250, **आई. सी. आई. सी. आई. बैंक लिमिटेड** बनाम **उमाकांत मोहापात्रा वाले मामले** में तारीख 5 अक्तूबर, 2018 को पारित किए गए नवीनतम निर्णय में सरफेसी अधिनियम से उद्भूत होने वाले मामलों के संदर्भ में अंतरिम आदेश प्रदान किए जाने की प्रथा का अनुमोदन किया है और यह अभिनिर्धारित किया है :-

"उच्च न्यायालय माननीय न्यायमूर्ति नवीन सिन्हा द्वारा प्राधिकृत अधिकारी, स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर और एक अन्य **बनाम** वी. एस. मैथ्यू के. सी. [(2018) 3 एस. सी. सी. 85] वाले मामले में तारीख 30 जनवरी, 2018 को नवीनतम रूप से पारित निर्णय को सम्मिलित करते हुए इस न्यायालय द्वारा पारित किए गए अनेक निर्णयों के बावजूद ऐसे मामलों पर विचार करना जारी रखे हुए हैं, जो 2002 के प्रतिभूतिकरण और वित्तीय आस्तियों का पुनर्गठन और प्रतिभूत हित का प्रवर्तन अधिनियम (सरफेसी अधिनियम) के अंतर्गत उद्भूत होते हैं और उन व्यक्तियों के पक्ष में अंतरिम आदेश जारी करते रहते हैं, जो गैर निष्पादनीय आस्ति हैं ।

नवीनतम निर्णय, जिसे इस न्यायालय के पूर्ववर्ती निर्णयों का अनुसरण करते हुए पारित किया गया, को ध्यान में रखते हुए रिट याचिका पोषणीय नहीं थी, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया -

18. हम कोई सहायता नहीं कर सकते किंतु उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण का अननुमोदन द्वारिकेश शुगर इंडस्ट्रीज लिमिटेड **बनाम** प्रेम हैवी इंजीनियरिंग वर्कस (प्राइवेट) लिमिटेड और एक अन्य [(1997)6 एस. सी. सी. 450] वाले मामले में पहले से उल्लिखित कारणोंवश करते हैं, जिसमें यह मताभिव्यक्ति की गई कि -

'32. जब विधि की दृष्टि में कोई स्थिति इस न्यायालय की न्यायिक उद्घोषणा के परिणामस्वरूप सुस्थिरीकृत हो जाती है, तो इसका अर्थ स्थिरीकृत विनिश्चयों का अनदेखा किए जाने और तत्पश्चात् कोई ऐसा न्यायिक आदेश पारित किए जाने, जो स्पष्टतः स्थिरीकृत विधिक स्थिति के विपरीत है, के प्रयोजनार्थ उच्च न्यायालयों को सम्मिलित करते हुए अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा न्यायिक अनौचित्य होगा । इस प्रकार की न्यायिक सक्रियता की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती और हम स्थिरीकृत सिद्धांतों को लागू न किए जाने और सनक से परिपूर्ण आदेशों को पारित किए जाने, जो दोनों में से किसी एक पक्ष को दोषपूर्ण और अनपेक्षित अनुतोष प्रदान किए जाने का प्रभाव रखते हैं, की अधीनस्थ न्यायालयों की प्रवृत्ति की दृढ़तापूर्वक निंदा करते हैं । अभी भी समय है कि इस प्रवृत्ति पर रोक लगाई जाए । इस मामले में रिट याचिका के पोषणीय न होने के कारण प्रकटतः आक्षेपित आदेश को सम्मिलित करते हुए समस्त आदेश दोषपूर्ण हैं, जिनको अपास्त किया जाता है ।"

10. माननीय उच्चतम न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णयों का अनुसरण करते हुए इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने 2019 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 14645, **सुषमा यादव और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में तारीख 15 मई, 2019 को निर्णय पारित किया, जो निम्नलिखित हैं :-

"20. न्यायालय का यह पवित्र कर्तव्य है कि वह इस बात को सुनिश्चित करे कि लोक धन, जिसे वित्तीय संस्थाओं द्वारा दिए

---

[1] 2019 (9) ए. डी. जे. 102 (डी. बी.).

गए उधार स्वरूप दिया गया है, के संबंध में विचार करते हुए जनता द्वारा उसमें व्यक्त किया गया विश्वास बना रहे और लोक धन का दुरुपयोग या दुर्विनियोग न हो । यह न्यायालय का कार्य नहीं है कि वह उधार स्वरूप प्रदान किए गए लोक धन को उधार दान के रूप में प्रतीत करे या उधार लेने वालों, जिन्होंने ऋण की सुविधा का लाभ लिया है और उसका पुनर्संदाय करने में अनिच्छुक है, के पक्ष में अनुचित सहानुभूति दर्शित करे । कभी-कभी उधार लेने वालों के लिए भी संदाय में विलंब के वास्तविक कारण हो सकते हैं, किंतु इस प्रकार के मामलों को समुचित फोरमों, जिन्हें इस प्रकार के मामलों पर विचार किए जाने के लिए सृजित किया गया है, द्वारा संबोधित किया जाना चाहिए । ऐसे मामलों में इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब नहीं लिया जाना चाहिए ।"

11. अतः, हम ऊपर उल्लिखित कारणोंवश वर्तमान रिट याचिका पर विचार करने से इनकार करते हैं और याचियों को निर्देशित करते हैं कि वे उस आनुकल्पिक अनुतोष का आश्रय लें, जो उनको विधि के अंतर्गत उपलब्ध है । रिट याचिका तद्नुसार खारिज की जाती है ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

शु.

प्रिंस फिलिंग स्टेशन (मैसर्स)

बनाम

भारत संघ और अन्य

[2020 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 22409]

तारीख 17 दिसंबर, 2020

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी और न्यायमूर्ति योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226, 19(1)(छ) और 19(6)(i) – नागरिकों को कोई वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारबार करने का अधिकार – सामान्य अनुक्रम में किसी कारबारी को यह अधिकार नहीं है कि वह किसी अन्य प्रतियोगी कारोबारी को उसका कारबार चलाने के अधिकार का प्रयोग करने से प्रवारित किए जाने की ईप्सा करे – किसी व्यापार या कारबार में प्रतियोगिता निर्बंधनों, जो अनुज्ञेय हों और जिनको जनसाधारण के हित में अधिनियमित किसी विधि द्वारा अधिरोपित किया गया हो, के अध्यधीन होती हैं – कोई व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि कोई व्यक्ति ऐसा कोई कारबार या व्यापार न करे जिससे उसके व्यापार या कारबार प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो ।

वर्तमान रिट याचिका याची, जिसे भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड द्वारा एम.एस./एच.एस.डी की फुटकर बिक्री के प्रतिष्ठान का डीलर नियुक्त किया गया, ने मुख्यत: तारीख 15 जून, 2019 के आशय पत्र और तारीख 26 अगस्त, 2020 के आशय पत्र के शुद्धिपत्र, जिसके अंतर्गत यह प्रस्तावित है कि प्रत्यर्थी संख्या 6 को तारीख 25 नवंबर, 2018 के विज्ञापन के अनुसरण में भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड के फुटकर प्रतिष्ठान के डीलर के रूप में प्रस्ताव दिया जाए, जारी किए जाने के संबंध में शिकायत किए जाने की ईप्सा करते हुए फाइल की है । याची ने रिट याचिका के पैरा 8 में यह अभिकथित किया है कि उसको भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड द्वारा सी.सी. कोटि के अंतर्गत एम.एस./एच.एस.डी. के फुटकर डीलर के रूप में नियुक्त किया गया है और उसका प्रस्तावित प्रतिष्ठान याची के प्रतिष्ठान से मात्र 800 मीटर

की दूरी पर है और इस प्रकार से भारत पेट्रोलियम लिमिटेड का विक्रय अत्यधिक प्रतिकूल रूप से प्रभावित होगा और याची को पूर्वोक्त प्रतिष्ठान के कारण नुकसान बर्दाश्त करना पड़ेगा और इस प्रकार से याची व्यथित व्यक्ति है । प्रत्यर्थियों ने याचिका की पोषणीयता पर इस आधार पर आक्षेप किए कि याची को एक प्रतियोगी कारोबारी होने के कारण इस रिट याचिका का आश्रय लेने का अधिकार नहीं है, चूंकि उसको व्यथित व्यक्ति नहीं कहा जा सकता और इस संबंध में रिंकी गुप्ता बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए नवीनतम निर्णय का अवलंब लिया गया । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – उत्प्रेक्षण की रिट फाइल किए जाने के प्रयोजनार्थ किसी व्यक्ति के 'व्यथित व्यक्ति' होने की अपेक्षा पर जसभाई मोतीभाई देसाई बनाम रोशन कुमार वाले मामले में विचार किया गया और विभिन्न निर्णयज विधियों पर चर्चा के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया गया कि याची को उत्प्रेक्षण की रिट फाइल किए जाने के प्रयोजनार्थ अधिकारिता का अवलंब लेने के अधिकार का प्रयोग करने के लिए 'व्यथित व्यक्ति' होना चाहिए और यदि वह इस शर्त को पूर्ण नहीं करता, तो न्यायालय अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए उसको असाधारण अनुतोष प्रदान करने से इनकार कर देगा । उस मामले में अपीलार्थी द्वारा किया गया पक्षकथन कि एक ही शहर में प्रतियोगी सिनेमा घर स्थापित किए जाने के कारण उसके वाणिज्यिक हित प्रतिकूल रूप से प्रभावित होंगे, जिसके कारण उसको आर्थिक हानि और प्रतियोगिता के कारण कारबार की हानि का सामना करना पड़ेगा, के बाबत यह अभिनिर्धारित किया गया कि उसके विधिक रूप से संरक्षित ऐसे हित प्रभावित नहीं होंगे, जिसके कारणवश उसका कोई न्यायसंगत दावा उद्भूत होता हो और यह अभिनिर्धारित किया गया कि उसकी इच्छा पर अधिकार प्रेक्षा की रिट जारी किया जाना कारबार में स्वस्थ्य प्रतियोगिता को समाप्त कर देगा । इसी प्रकार के विचार मिथिलेश गर्ग और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य वाले मामले में भी व्यक्त किए गए, जिसमें 1988 के मोटर यान अधिनियम के अंतर्गत वर्तमान अनुज्ञाधारक द्वारा अनुज्ञा प्रदान किए जाने को चुनौती दी गई थी, को इस आधार पर अमान्य कर दिया गया

कि अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन प्रदत्त अधिकार प्रतिस्पर्धा को समाप्त किए जाने के अधिकार तक विस्तारित नहीं होते और यदि अधिक प्रचालक होंगे, तो इसका अर्थ स्वस्थ्य प्रतियोगिता और प्रभावी यातायात प्रणाली से होगा । हम पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए इस स्थिति को दोहराते हैं कि सामान्य अनुक्रम के दौरान कारबार के किसी प्रतियोगी को यह अधिकार नहीं होगा कि वह किसी प्रतियोगी को उसका कारबार चलाने के अधिकार का प्रयोग करने से प्रवारित किए जाने की ईप्सा करे । किसी व्यापार या कारबार में प्रतियोगिता निर्बंधनों, जो अनुज्ञेय हों और जिनको जनसाधारण के हित में अधिनियमित किसी विधि द्वारा अधिरोपित किया गया हो, के अध्यधीन होती है । तथापि, कोई व्यक्ति इस प्रकार के किसी निर्बंधन से स्वतंत्र होकर यह दावा नहीं कर सकता कि ऐसा कोई व्यक्ति ऐसा कोई कारबार या व्यापार नहीं कर सकता, जिससे उसका अपना व्यापार या कारबार प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता हो । याची को संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब लिए जाने के प्रयोजनार्थ अधिकार का प्रयोग करने के लिए 'व्यथित व्यक्ति' होना चाहिए । हमारा विचार है कि जहां याची का दावा मात्र किसी प्रतियोगी को कारबार चलाने के उसके अधिकार का प्रयोग करने से प्रवारित करना हो, तो उसको उस रिट याचिका का आश्रय लेने का अधिकार नहीं होगा, चूंकि इस प्रकार की रिट याचिका को फाइल किए जाने का आवश्यक रूप से उद्देश्य कारबार में स्वस्थ्य प्रतियोगिता को समाप्त करना होगा । (पैरा 6, 7, 8 और 9)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1992]	(1992) 1 एस. सी. सी. 168 : **मिथिलेश गर्ग और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	7
[1976]	(1976) 1 एस. सी. सी. 671 : **जसभाई मोतीभाई देसाई** बनाम **रोशन कुमार** ;	6
[1970]	(1970) 1 एस. सी. सी. 575 : **नगर राइस और फ्लावर मिल्स** बनाम **एन. टी. गोवडा** ।	5

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2020 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 22409.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री अवधेश कुमार सिंह और अभय कुमार सिंह

प्रत्यर्थियों की ओर से अपर महासालिसीटर, श्री आनंद तिवारी, मुख्य स्थायी काउंसेल और श्री विकास बुधवार

आदेश

याची की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल, प्रत्यर्थी संख्या 4 की ओर से उपस्थित विद्वान् स्थायी काउंसेल और प्रत्यर्थी संख्या 1, 2 और 3 की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल श्री आनंद तिवारी की तरफ से उपस्थित काउंसेल श्री यश पांडिया को सुना ।

2. वर्तमान रिट याचिका याची को एम.एस./एच.एस.डी की फुटकर के प्रतिष्ठान का डीलर नियुक्त किए जाने, जिसे भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड द्वारा प्रदान किया गया, ने मुख्यतः तारीख 15 जून, 2019 के आशय पत्र और तारीख 26 अगस्त, 2020 के आशय पत्र के शुद्धिपत्र को जारी किए जाने के संबंध में शिकायत किए जाने की ईप्सा करते हुए फाइल की गई है, जिसके अंतर्गत यह प्रस्तावित है कि प्रत्यर्थी संख्या 6 को तारीख 25 नवंबर, 2018 के विज्ञापन के अनुसरण में भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड के फुटकर प्रतिष्ठान के डीलर के रूप में प्रस्ताव दिया जाए ।

3. याची ने रिट याचिका के पैरा 8 में यह अभिकथित किया है :–

"8. यह कि याची को भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड द्वारा सी.सी. कोटि के अंतर्गत एम.एस./एच.एस.डी. के फुटकर डीलर के रूप में नियुक्त किया गया है और यह प्रस्तावित प्रतिष्ठान याची के प्रतिष्ठान से मात्र 800 मीटर की दूरी पर है और इस प्रकार से भारत पेट्रोलियम लिमिटेड का विक्रय अत्यधिक प्रतिकूल रूप से प्रभावित होगा और याची को पूर्वोक्त प्रतिष्ठान के

कारण नुकसान बर्दाश्त करना पड़ेगा और इस प्रकार से याची व्यथित व्यक्ति है ।"

4. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने याचिका की पोषणीयता पर इस आधार पर आक्षेप किए कि याची को एक प्रतियोगी कारोबारी व्यक्ति होने के कारण इस रिट याचिका का आश्रय लेने का अधिकार प्राप्त नहीं है, चूंकि उसको व्यथित व्यक्ति नहीं कहा जा सकता और इस संबंध में **रिंकी गुप्ता** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** [2020 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 14091, तारीख निर्णय 5 नवंबर, 2020] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए नवीनतम निर्णय का अवलंब लिया गया ।

5. यह प्रश्न की क्या कारबार में कोई प्रतियोगी पक्ष किसी विरोधी पक्ष को कारबार चलाने के उसके अधिकार का प्रयोग करने से प्रवारित किए जाने की ईप्सा कर सकता है, इस न्यायालय के समक्ष **नगर राइस और फ्लावर मिल्स** बनाम **एन. टी. गोवडा**[1] वाले मामले में विचारार्थ उद्भूत हुआ था । इस मामले में एक चावल मिल के निकट स्थान पर एक अन्य चावल मिल स्थापित किए जाने का विरोध इस आधार पर किया गया था कि उसका कारबार प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो जाने की संभावना है और उस संदर्भ में यह अभिनिर्धारित किया गया कि किसी कारबार में कोई प्रतियोगी किसी परस्पर विरोधी प्रतियोगी को समान कारबार करने से प्रवारित किए जाने की ईप्सा नहीं कर सकता । उस निर्णय में इस संबंध में की गई मताभिव्यक्ति निम्नलिखित हैं :-

> "8. संसद् ने 1958 का धान कुटाई उद्योग (विनियम) अधिनियम अधिनियमित करते हुए इन परिसीमाओं को विहित किया है कि कोई विद्यमान चावल धान मिल अनुज्ञप्ति अभिप्राप्त करने के पश्चात् ही कारबार करेगी और यदि उस धान मिल को उसके वर्तमान स्थान से कहीं अन्यत्र अंतरित किया जाना है, तो केंद्रीय सरकार की पूर्व अनुज्ञा अभिप्राप्त की जाएगी । अपीलार्थियों

[1] (1970) 1 एस. सी. सी. 575.

द्वारा उनकी धान मिल को अन्यत्र अंतरित किए जाने की अनुज्ञा खाद्य और सिविल आपूर्ति के निदेशक से अभिप्राप्त कर ली गई थी । अपीलार्थियों ने खाद्य और सिविल आपूर्ति के निदेशक से मंजूरी अभिप्राप्त किए जाने के पूर्व धान मिल के कार्यान्वयन आरंभ नहीं किए थे । यदि यह अवधारणा कर भी ली जाए कि मशीनरी को उसके विद्यमान स्थान से अंतरित किए जाने के पूर्व प्राधिकारियों से पूर्व अनुज्ञा अभिप्राप्त की जानी थी, तो हम तथ्य का मूल्यांकन कर पाने में असमर्थ हैं कि प्रत्यर्थियों को नए स्थान पर मशीनरी के स्थापन की अनुज्ञा प्रदान किए जाने के लिए प्राधिकारियों द्वारा अनुज्ञा प्रदान किए जाने के संबंध में क्या शिकायत उत्पन्न हो सकती हैं । कारबार करने का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन मूल अधिकार है, अत: इस अधिकार का प्रयोग केवल अनुच्छेद 19(छ)(i) के अधीन सामान्य जनता के हितों में विधि द्वारा अधिरोपित निर्बंधनों के अध्यधीन होता है ।

9. धारा 8(3)(ग) मात्र विनियामक प्रकृति की धारा है, यदि इसका अनुपालन नहीं किया जाता, तो अपीलार्थी अधिसंभाव्य रूप से शास्ति के देय के दायी हो जाएंगे, किंतु कारबार में कोई प्रतियोगी अपीलार्थियों को कारबार चलाने के उनके अधिकार का प्रयोग करने से प्रवारित किए जाने की ईप्सा चूक के कारणवश नहीं कर सकता और न ही अपीलार्थी की चीनी मिल को नई चीनी मिल माना जाएगा । व्यापार प्रतिस्पर्धा उन निर्बंधनों के अध्यधीन हो सकती है, जैसाकि अननुज्ञेय हो और जिनको राज्य द्वारा अनुच्छेद 19(छ) के अधीन जनसाधारण के हितों में अधिनियमित किसी विधि द्वारा अधिरोपित किया गया हो, किंतु कोई व्यक्ति ऐसे निर्बंधन से स्वतंत्र रूप से मुक्त होने का दावा नहीं कर सकता कि कोई अन्य व्यक्ति वही कारबार या व्यापार नहीं करेगा जिससे उसका व्यापार या कारबार विपरीत रूप से प्रभावित हो जाए । अपीलार्थियों ने नए स्थान पर भवन में चीनी मिल के कार्यान्वयनों को चलाए जाने के प्रयोजनार्थ इन कानूनी अपेक्षाओं का पालन

किया । यदि यह उपधारणा की जाती है कि कोई पूर्ववर्ती अनुज्ञा अभिप्राप्त नहीं की गई थी, तो प्रत्यर्थियों को अनुज्ञा प्रदान किए जाने को चुनौती देने का कोई अधिकार नहीं होगा, क्योंकि प्रत्यर्थियों में निहित किसी अधिकार का अतिलंघन नहीं हुआ ।"

6. उत्प्रेषण की रिट फाइल किए जाने के प्रयोजनार्थ किसी व्यक्ति के 'व्यथित व्यक्ति' होने की अपेक्षा पर **जसभाई मोतीभाई देसाई** बनाम **रोशन कुमार**[1] वाले मामले में विचार किया गया और विभिन्न निर्णयज विधियों पर चर्चा के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया गया कि याची को उत्प्रेषण की रिट फाइल किए जाने के प्रयोजनार्थ अधिकारिता का अवलंब लेने के अधिकार का प्रयोग करने के लिए 'व्यथित व्यक्ति' होना चाहिए और यदि वह इस शर्त को पूर्ण नहीं करता, तो न्यायालय अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए उसको असाधारण अनुतोष प्रदान करने से इनकार कर देगा । उस मामले में अपीलार्थी द्वारा किया गया पक्षकथन कि एक ही शहर में प्रतियोगी सिनेमा घर स्थापित किए जाने के कारण उसके वाणिज्यिक हित प्रतिकूल रूप से प्रभावित होंगे, जिसके कारण उसको आर्थिक हानि और प्रतियोगिता के कारण कारबार की हानि का सामना करना पड़ेगा, के बाबत यह अभिनिर्धारित किया गया कि उसके विधिक रूप से संरक्षित ऐसे हित प्रभावित नहीं होंगे, जिसके कारणवश उसका कोई न्यायसंगत दावा उद्भूत होता हो और यह अभिनिर्धारित किया गया कि उसकी इच्छा पर अधिकार प्रेक्षा की रिट जारी किया जाना कारबार में स्वस्थ्य प्रतियोगिता को समाप्त कर देगा ।

7. इसी प्रकार के विचार **मिथिलेश गर्ग और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य**[2] वाले मामले में भी व्यक्त किए गए, जिसमें 1988 के मोटर यान अधिनियम के अंतर्गत वर्तमान अनुज्ञाधारक द्वारा अनुज्ञा प्रदान किए जाने को चुनौती दी गई थी, को इस आधार पर अमान्य कर दिया गया कि अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन प्रदत्त अधिकार प्रतिस्पर्धा

---

[1] (1976) 1 एस. सी. सी. 671.

[2] (1992) 1 एस. सी. सी. 168.

को समाप्त किए जाने के अधिकार तक विस्तारित नहीं होते और यदि अधिक प्रचालक होंगे, तो इसका अर्थ स्वस्थ्य प्रतियोगिता और प्रभावी यातायात प्रणाली से होगा ।

8. हम पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए इस स्थिति को दोहराते हैं कि सामान्य अनुक्रम के दौरान कारबार के किसी प्रतियोगी को यह अधिकार नहीं होगा कि वह किसी प्रतियोगी को उसका कारबार चलाने के अधिकार का प्रयोग करने से प्रवारित किए जाने की ईप्सा करे । किसी व्यापार या कारबार में प्रतियोगिता निर्बंधनों, जो अनुज्ञेय हों और जिनको जनसाधारण के हित में अधिनियमित किसी विधि द्वारा अधिरोपित किया गया हो, के अध्यधीन होती है । तथापि, कोई व्यक्ति इस प्रकार के किसी निर्बंधन से स्वतंत्र होकर यह दावा नहीं कर सकता कि ऐसा कोई व्यक्ति ऐसा कोई कारबार या व्यापार नहीं कर सकता, जिससे उसका अपना व्यापार या कारबार प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता हो ।

9. याची को संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब लिए जाने के प्रयोजनार्थ अधिकार का प्रयोग करने के लिए 'व्यथित व्यक्ति' होना चाहिए । हमारा विचार है कि जहां याची का दावा मात्र किसी प्रतियोगी को कारबार चलाने के उसके अधिकार का प्रयोग करने से प्रवारित करना हो, तो उसको उस रिट याचिका का आश्रय लेने का अधिकार नहीं होगा, चूंकि इस प्रकार की रिट याचिका को फाइल किए जाने का आवश्यक रूप से उद्देश्य कारबार में स्वस्थ्य प्रतियोगिता को समाप्त करना होगा ।

10. पूर्वोक्त कारणोंवश रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य है और इसको तद्नुसार खारिज किया जाता है ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

बसंती देव

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य

(2000 की प्रकीर्ण रिट याचिका संख्या 793)

तारीख 29 मई, 2020

न्यायमूर्ति सुधांशु धूलिया

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 14 और 299 [सपठित 2016 के उत्तराखंड पंचायती राज अधिनियम की धारा 90(1)(ग)] – याची द्वारा जिला पंचायत अध्यक्ष पद पर निर्वाचन के बाद भी सरकारी ठेकेदार की हैसियत से कार्य करते रहना और सरकारी ठेके प्राप्त करते रहना – जिला पंचायत अध्यक्ष लोक सेवक होने के नाते सरकारी ठेके प्राप्त करने का हकदार नहीं है – उसका सरकारी ठेकेदार का रजिस्ट्रीकरण निरस्त किया जाना विधिसम्मत है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि याची उत्तराखंड राज्य के बागेश्वर की जिला पंचायत की दिसंबर, 2019 से निर्वाचित अध्यक्ष है । जिला पंचायत अध्यक्ष पद पर निर्वाचन के पूर्व वह उत्तराखंड सरकार की वर्ग 'ए' ठेकेदार के रूप में रजिस्ट्रीकृत थी और इस प्रकार वह सरकारी ठेके प्राप्त किया करती थी और वर्तमान में भी प्राप्त कर रही है । देहरादून स्थित लोक कार्य विभाग के मुख्य अभियंता, लेवल - 1 द्वारा याची का वर्ग 'ए' ठेकेदार के रूप में रजिस्ट्रीकरण तारीख 15 मई, 2020 के आक्षेपित आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया था । मुख्य अभियंता, लेवल-1 ने तारीख 15 मई, 2020 के आक्षेपित आदेश में 2016 के उत्तराखंड पंचायती राज्य अधिनियम के उपबंधों को निर्दिष्ट किया है, जिनमें अन्य बातों के साथ-साथ जिला पंचायत के निर्वाचित अध्यक्ष को लोक सेवक माना गया है । याची ने वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से

उपरोक्त आदेश को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी है । न्यायालय द्वारा रिट याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस बाबत कतई संदेह नहीं है कि याची एक लोक सेवक है । इसलिए तर्कसंगत रूप से वह लोक सेवक की हैसियत में अपने पक्ष में सरकारी ठेके प्राप्त नहीं कर सकती । वास्तव में वह इस प्रकार के ठेकों के लिए किसी भी प्रकार की बोली लगाने के लिए अर्हता प्राप्त नहीं है । याची के लिए उचित अनुक्रम यह होता कि वह जिला पंचायत के अध्यक्ष पद पर नियुक्त होने के तुरंत पश्चात् अपने रजिस्ट्रीकरण के रद्दकरण की प्रार्थना करते हुए आवेदन प्रस्तुत करती । किंतु याची ने इसके विपरीत उसके रजिस्ट्रीकरण के निरस्तीकरण को इस वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी है । किसी लोक सेवक को सरकारी ठेके प्रदान नहीं किए जा सकते । न केवल सरकारी ठेके, बल्कि इस बाबत भी विचार किया जा रहा है कि यदि यह साबित होता है कि याची ने अध्यक्ष के पद पर उसके निर्वाचन के पश्चात् भी सरकारी ठेके प्राप्त करना जारी रखा था, तो उसके विरुद्ध क्या कार्रवाई किए जाने की आवश्यकता है । यह न्यायालय इस प्रश्न को विधि अनुसार उचित कार्रवाई किए जाने का कार्य सरकार पर छोड़ती है । (पैरा 5, 6 और 7)

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2000 की प्रकीर्ण रिट याचिका संख्या 793.

संविधान, 1950 अनुच्छेद 226 के अधीन प्रकीर्ण रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री के. पी. उपाध्याय (वरिष्ठ अधिवक्ता) और पी. पी. भट्ट

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री योगेश पांडेय (अपर मुख्य स्थायी काउंसेल), अनुराग बेसारिया, नरायण दत्त, (सुश्री) अंजली भार्गव और गजेन्द्र त्रिपाठी

आदेश

याची बागेश्वर की जिला पंचायत की निर्वाचित अध्यक्ष है, जो कि ऐसा पद है, जिसे वह दिसंबर, 2019 से धारण कर रही है । इसके पूर्व वह उत्तराखंड सरकार द्वारा वर्ग 'ए' ठेकेदार के रूप में रजिस्ट्रीकृत थी और इस प्रकार वह अपने पक्ष में सरकारी ठेके प्राप्त किया करती थी और वर्तमान में भी प्राप्त कर रही है ।

2. जब याची की ओर से उपस्थित वरिष्ठ काउंसेल श्री के. पी. उपाध्याय से इस बाबत विनिर्दिष्ट रूप से पूछताछ की गई तो उन्होंने याची द्वारा दिए गए अनुदेशों के आधार पर इस न्यायालय को सूचित किया कि याची बागेश्वर के जिला पंचायत अध्यक्ष पद पर निर्वाचित होने के बाद भी सरकार से ठेके प्राप्त कर रही है ।

3. तत्पश्चात् देहरादून स्थित लोक कार्य विभाग के मुख्य अभियंता, लेवल - 1 द्वारा याची के वर्ग 'ए' ठेकेदार के रूप में रजिस्ट्रीकरण को तारीख 15 मई, 2020 के आक्षेपित आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया । यही वह आदेश है जिसको याची ने वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी है ।

4. मुख्य अभियंता, लेवल-1 ने तारीख 15 मई, 2020 के आक्षेपित आदेश में 2016 के उत्तराखंड पंचायती राज्य अधिनियम के उपबंधों को निर्दिष्ट किया है, जिनमें अन्य बातों के साथ-साथ जिला पंचायत के निर्वाचित अध्यक्ष को लोक सेवक माना गया है ।

5. इस बाबत कतई संदेह नहीं है कि याची एक लोक सेवक है । इसलिए तर्कसंगत रूप से वह लोक सेवक की हैसियत में अपने पक्ष में सरकारी ठेके प्राप्त नहीं कर सकती । वास्तव में वह इस प्रकार के ठेकों के लिए किसी भी प्रकार की बोली लगाने के लिए अर्हता प्राप्त नही है । याची के लिए उचित अनुक्रम यह होता कि वह जिला पंचायत के अध्यक्ष पद पर नियुक्त होने के तुरंत पश्चात् अपने रजिस्ट्रीकरण के रद्दकरण की प्रार्थना करते हुए आवेदन प्रस्तुत करती । किंतु याची ने इसके

विपरीत उसके रजिस्ट्रीकरण के निरस्तीकरण को इस वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी है ।

6. किसी लोक सेवक को सरकारी ठेके प्रदान नहीं किए जा सकते । न केवल सरकारी ठेके, बल्कि इस बाबत भी विचार किया जा रहा है कि यदि यह साबित होता है कि याची ने अध्यक्ष के पद पर उसके निर्वाचन के पश्चात् भी सरकारी ठेके प्राप्त करना जारी रखा था, तो उसके विरुद्ध क्या कार्रवाई किए जाने की आवश्यकता है ।

7. यह न्यायालय इस प्रश्न को विधि अनुसार उचित कार्रवाई किए जाने का कार्य सरकार पर छोड़ती है ।

8. यह न्यायालय इस मामले में मध्यक्षेप किए जाने का कोई कारण नहीं पाती । परिणामस्वरूप रिट याचिका खारिज की जाती है ।

9. यद्यपि आरंभिकत: यह न्यायालय याचिका को लागत सहित खारिज करने के लिए आनत थी, किंतु याची के विद्वान् काउंसेल श्री के. पी. उपाध्याय द्वारा निरंतर प्रार्थना की गई कि वर्तमान अप्रायिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए याची पर कम से कम लागत अधिरोपित नहीं की जानी चाहिए । परिणामस्वरूप कोई लागत अधिरोपित नहीं की जाती है ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

ओल्गा डिसूजा और अन्य

बनाम

नीतिन डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड, गोवा और अन्य

(2020 की अपील संख्या 8)

तारीख 23 जुलाई, 2020

न्यायमूर्ति दमा सेषाद्री नायडू

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 39, नियम 1 [संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52] – अंतरिम व्यादेश के लिए आवेदन अस्वीकृत किया जाना – वादी द्वारा प्रतिवादियों द्वारा कराए जा रहे निर्माण के विरुद्ध अंतरिम व्यादेश की ईप्सा किया जाना, जिसको प्रदान किए जाने से न्यायालय द्वारा साम्यापूर्ण विचारणाओं के आधार पर, न कि गुणागुण के आधार पर इनकार किया जाना – चूंकि इस मामले में लंबित वाद का सिद्धांत लागू होता है, अतः वादग्रस्त संपत्ति के बाबत समस्त निर्माण कार्य वादी द्वारा घोषणा के लिए फाइल किए गए वाद के परिणाम के अध्यधीन होंगे – अतः अंतरिम व्यादेश का आवेदन न्यायतः अस्वीकृत किया गया ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि सभी 11 अपीलार्थी गोवा के मापुसा के वरिष्ठ वर्ग न्यायालय के समक्ष फाइल किए गए 2019 के विशेष सिविल वाद संख्या 62 में वादी हैं । उन्होंने घोषणा और व्यादेश के लिए वाद फाइल किया । प्रत्यर्थी प्रतिवादी हैं । इन प्रत्यर्थियों में से प्रत्यर्थी संख्या 1 से 6 क्रेता हैं और 7 से 12 विक्रेता हैं । वादियों और प्रतिवादियों, दोनों ने इस बात को स्वीकार किया है कि डोरोथी ब्रेगेंज़ा विधवा माता थी, जिसकी चार पुत्रियां और दो पुत्र थे । पुत्रों के नाम सेबेस्टियो ए. ब्रेगेंज़ा और जोस लॉरेंस ब्रेगेंज़ा थे । उपरोक्त माता और उसके दोनों पुत्रों ने वादग्रस्त संपत्ति तारीख 6 मई, 1975 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा क्रय की थी । विक्रय विलेख से यह स्पष्ट होता है कि डोरोथी के पास उसके जीवनकाल के दौरान संपत्ति के

भोगाधिकार के अधिकार थे और उसके दोनों जीवित पुत्रों के पास संपत्ति के आत्यंतिक स्वामित्व के अधिकार थे । डोरोथी की मृत्यु के पश्चात् सेबेस्टियो के बच्चों और जोस लॉरेंस और उसकी पत्नी ने आत्यंतिक रूप से संपत्ति के स्वामी होने का दावा करते हुए प्रत्यर्थियों को तारीख 1 से 6 मार्च, 2018 को संपत्ति का विक्रय कर दिया । उसके पूर्व फरवरी, 2018 में सेबेस्टियो और जोस लॉरेंस के उत्तराधिकारियों ने राजपत्र में एक अधिसूचना प्रकाशित कराई थी, जिसके द्वारा उन्होंने घोषणा की थी कि उनके अतिरिक्त डोरोथी के उत्तराधिकार का दावा करने वाला 'कोई अन्य व्यक्ति या उत्तराधिकारी' शेष नहीं हैं । यद्यपि संपत्ति मार्च, 2018 में विक्रय की गई थी, फिर भी वादियों का यह प्रकथन है कि उनको इस विक्रय के बारे में मार्च, 2019 में अर्थात् एक वर्ष के पश्चात् जानकारी प्राप्त हुई । अतः, उनमें से एक अर्थात् प्रथम वादी ने अन्य लोगों के साथ इस संपत्ति का सह-स्वामी होने का दावा करते हुए प्रतिवादी संख्या 7 से 12 को विधिक सूचना जारी की । उसी माह में प्रतिवादियों ने वादी के सह-स्वामित्व के दावे से इनकार करते हुए अधिसूचना का उत्तर दिया । अगस्त, 2019 में वादियों ने इन अनुतोषों की ईप्सा करते हुए वाद फाइल किया कि (क) इस बाबत घोषणा की जाए कि तारीख 23 मार्च, 2018 को निष्पादित वादग्रस्त विक्रय विलेख अवैध है, विधि की दृष्टि में दूषित हैं और उसमें अन्य अनेक त्रुटियां हैं ; (ख) इस बाबत घोषणा की जाए कि तारीख 8 फरवरी, 2018 का वादग्रस्त उत्तराधिकार के विरासत का विलेख अवैध है, विधि की दृष्टि में दूषित है और उसमें अनेक त्रुटियां है ; (ग) प्रपत्र I और XIV में – नामांतरण कार्यवाहियों को अपास्त किया जाए ; (घ) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को वादग्रस्त संपत्ति में कोई निर्माण या विकास कार्य करने से निषिद्ध किया जाए ; (ङ) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को संपत्ति की प्रकृति को किसी भी प्रकार से परिवर्तित किए जाने से निषिद्ध किया जाए; (च) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को किसी भी प्रकार से वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में तृतीय पक्ष के अधिकार सृजित करने से निषिद्ध किया जाए; (छ) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को वादग्रस्त संपत्ति में निर्मित क्षेत्र/दुकानों/फ्लैट/अपार्टमेंट का विक्रय करने से किसी करार/दस्तावेज में प्रविष्ट होने से निषिद्ध किया

जाए ; (ज) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को आज्ञापक व्यादेश द्वारा 'वादग्रस्त संपत्ति में किए गए निर्माण कार्य को ढहाए जाने या हटाए जाने और उस निर्माण के नीचे स्थित भूमि को उसकी मूल स्थिति में पुन: बहाल किए जाने के लिए निदेशित किया जाए' । वादियों ने उपरोक्त अनुतोषों की ईप्सा करने के अतिरिक्त सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39, नियम 1 के अधीन अंतरिम व्यादेश के लिए आवेदन किया । वादियों द्वारा इन अंतरिम आदेशों की इप्सा की गई, "वाद के लंबन के दौरान प्रतिवादी संख्या 1 से 6 (क) कोई निर्माण कार्य नहीं करेंगे ; (ख) वादग्रस्त संपत्ति की प्रकृति को प्रवर्तित नहीं करेंगे ; (ग) वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में किसी तृतीय पक्ष के अधिकार सृजित नहीं करेंगे ; (घ) वादग्रस्त संपत्ति में निर्मित क्षेत्रों/दुकानों/फ्लैटों/अपार्टमेंट के विक्रय के लिए किसी करार/लिखत में प्रविष्ट नहीं होंगे । अंतिम अनुतोष (ङ.) इस आज्ञापक अंतरिम निर्देश के जारी किए जाने के प्रयोजनार्थ है कि प्रतिवादी संख्या 1 से 6 उस निर्माण को 'ढहा देंगे और हटा देंगे' जिसे वादग्रस्त संपत्ति पर किया गया है और भूमि की वास्तविक स्थिति को बहाल कर देंगे । विचारण न्यायालय ने उपरोक्त विवाद्यकों को विधि के तीन प्रमुख सिद्धांतों में परिवर्तित कर दिया, जो कोई अंतरिम व्यादेश पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ न्यायनिर्णयन में अंतर्वलित होते हैं, जो ये हैं, (क) क्या वादियों ने प्रथमदृष्टया मामले को साबित कर दिया है ? (ख) क्या सुविधा का संतुलन उनके पक्ष में है ? और (ग) यदि उनके पक्ष में कोई व्यादेश प्रदान नहीं किया गया, तो क्या उनको अपूर्णनीय क्षति का सामना करना पड़ेगा ? निश्चित रूप से विचारण न्यायालय ने अंतिम विवाद्यक विरचित करते हुए इस बात पर विचार किया कि क्या वादियों की हानि की क्षतिपूर्ति, यदि वादी उस हानि को साबित कर पाते हैं, धन के द्वारा की जा सकती है । विचारण न्यायालय ने तारीख 20 दिसंबर, 2019 को पारित अपने आदेश द्वारा अभिनिर्धारित किया, (क) यद्यपि वादियों ने तारीख 6 मई, 1975 के मूल विक्रय विलेख का दृढ़तापूर्वक अवलंब लिया है, फिर भी उन्होंने इस दस्तावेज को प्रस्तुत नहीं किया है, इसलिए, उनके विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए । (ख) वादियों ने मार्च, 2019 में विधिक सूचना जारी की थी, किंतु उन्होंने वाद फाइल किए जाने के प्रयोजनार्थ

अभी तक प्रतीक्षा की जिसके परिणामस्वरूप, प्रतिवादी संख्या 1 से 6 ने इस संपत्ति पर सारभूत रकम व्यय कर दी और भवन की अवसंरचना खड़ी कर दी । ये प्रतिवादी सद्भाविक क्रेता भी प्रतीत होते हैं । वादी के पक्ष में प्रथमदृष्ट्या कोई स्वत्व न पाए जाने के कारण इस न्यायालय के लिए यह प्रज्ञावान नहीं होगा कि प्रतिवादियों के विरुद्ध कोई व्यादेश पारित किया जाए । (ग) वादियों को किसी अपूर्णनीय क्षति का सामना भी नहीं करना पड़ेगा क्योंकि उनकी हानि, यदि कोई हुई हो, की क्षतिपूर्ति धन के द्वारा सदैव की जा सकती है । इसके विपरीत प्रतिवादी संख्या 1 से 6 को भवन निर्माताओं के रूप में अत्यधिक हानि बर्दाश्त करनी होगी, जो उन्होंने पहले ही व्यय कर दी है । इस मामले में यह तथ्य विचारणीय है कि लोगों के एक समूह ने दूसरे समूह से संपत्ति का एक भाग क्रय किया । फिर भी एक अन्य समूह ने उस संपत्ति पर सह-स्वामित्व का दावा किया । तब तक वह समूह जिसने संपत्ति को क्रय किया था, ने निर्माण कार्य आरंभ कर दिया था और इस प्रक्रिया में अत्यधिक प्रगति हो चुकी थी । संपत्ति के सह-स्वामित्व का दावा करने वाला समूह विचारण न्यायालय से अंतरिम निषेधाज्ञा का आदेश चाहता था, यह आदेश वादग्रस्त संपत्ति पर हो रहे निर्माण कार्य को रोकने के प्रयोजनार्थ था । विचारण न्यायालय ने ऐसा करने से इनकार कर दिया । अतः यह प्रकीर्ण अपील फाइल की गई । इस अपील में यह प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या इस न्यायालय को निचले न्यायालय द्वारा प्रयोग किए गए न्यायिक विवेकाधिकार में मध्यक्षेप करना चाहिए या निचले न्यायालय द्वारा विशिष्ट प्रकार से प्रयोग किए गए न्यायिक विवेकाधिकार में हस्तक्षेप करने से इनकार कर देना चाहिए ? अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मैं इस बाबत सहमत हूं कि इस मामले में विलंब का तत्व विद्यमान है, किंतु इस कारणवश यह नहीं कहा जा सकता कि अधिकारों के अधित्यजन का कारण होने वाली चूकें कारित हुईं । वादियों ने निर्माण आरंभ होने के लगभग दो माह की अवधि के पश्चात् वाद फाइल किया । अनेक सह-स्वामियों में से कुछ सह-स्वामियों से अभिकथित रूप से क्रय की गई संपत्ति के मामले में सद्भाविक क्रेताओं की संकल्पना उद्भूत नहीं होती ; इसके विपरीत जो संकल्पना लागू होती

है, वह निश्चित रूप से क्रेता सावधान वाली संकल्पना है । अधिसंभाव्य रूप से कारित होने वाली विधिक क्षति, जिसके वादी द्वारा बर्दाश्त किए जाने की संभाव्यता है, के संबंध में धन के रूप में प्रतिकर मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है । यहां पर यह अभिनिर्धारित किया जाना समयपूर्व होगा कि इस प्रश्न का विनिर्धारण विचारण के दौरान किया जाना चाहिए । मैं अभिनिर्धारित करता हूं कि विचारण न्यायालय ने अपने न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग किया है और मैं विवेकाधिकार के इस प्रयोग में कोई विधिक शैथिल्य नहीं पाता, जैसाकि वांडर लिमिटेड वाले मामले में उल्लेख किया गया है । इसलिए, मैं 2019 के विशेष सिविल वाद संख्या 62 में गोवा के मापुसा स्थित वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश 'बी.' के न्यायालय द्वारा पारित तारीख 20 दिसंबर, 2019 के आक्षेपित आदेश में कोई मध्यक्षेप करने के लिए आनत नहीं हूं । मैं यह भी अभिनिर्धारित करता हूं कि वादियों को साम्यापूर्ण विचारणाओं के आधार पर अंतरिम व्यादेश प्रदान किए जाने से इनकार किया गया था, न कि गुणागुण के आधार पर । इसलिए, यह निश्चित रूप से उचित मामला है, जो 'लंबित वाद' के सिद्धांत को आकर्षित करता है, जैसे संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 के अधीन कानूनी रूप से मान्यता प्रदान की गई है । इसका अर्थ यह है कि वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में किए गए समस्त विकास कार्य वाद के निर्णय के अध्यधीन होंगे । मैं स्पष्ट रूप से इस बात पर जोर देता हूं और आगे यह अभिनिधारित करता हूं कि विचारण न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश में जो मताभिव्यक्तियां की गई हैं या मैंने इस निर्णय में की हैं, प्रथम दृष्ट्या प्रकृति की हैं और वाद के किसी भी पक्ष के मामले को प्रभावित नहीं करती । (पैरा 35, 36, 37 और 38)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1998]	1998 (1) गोवा एल. टी. 138 : **फ्रांसिसको डी. रोसेरियो फेरारो** बनाम **पांडुरंग शिवराम** ;	30
[1995]	(1995) 5 एस. सी. सी. 545 : **गुजरात बोटलिंग कंपनी लिमिटेड** बनाम **कोका कोला कंपनी** ;	21

[1994] (1994) 1 एस. सी. सी. 1 :
एस. पी. चेंगालवाराया नायडू बनाम **जगन्नाथ** ; 20

[1990] (1990) सप्ली. एस. सी. सी. 727 :
वांडर लिमिटेड बनाम **एंटॉक्स इंडिया (प्राइवेट) लिमिटेड** । 13

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2020 की अपील संख्या 8.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 43, नियम 1 के अधीन प्रकीर्ण अपील ।

याचियों की ओर से	सर्वश्री जे. ई. कोएल्हो पैरेरा (वरिष्ठ अधिवक्ता) और वी. पविथ्रण
प्रत्यर्थियों की ओर से	श्री पी. वर्णेकर

निर्णय

सुना । विचारार्थ ग्रहण किया । प्रत्यर्थी संख्या 1 से 6 की ओर से विद्वान् काउंसेल उपस्थित हैं, इसलिए उन्होंने समन तामीली का आग्रह नहीं किया ।

I. प्रस्तावना :

लोगों के एक समूह ने दूसरे समूह से संपत्ति का एक भाग क्रय किया । फिर भी एक अन्य समूह ने उस संपत्ति पर सह-स्वामित्व का दावा किया । तब तक वह समूह जिसने संपत्ति को क्रय किया था, ने निर्माण कार्य आरंभ कर दिया था और इस प्रक्रिया में अत्यधिक प्रगति हो चुकी थी । संपत्ति के सह-स्वामित्व का दावा करने वाला समूह विचारण न्यायालय से अंतरिम निषेधाज्ञा का आदेश चाहता था, वह यह आदेश वादग्रस्त संपत्ति पर हो रहे विकास कार्य को रोकने के प्रयोजनार्थ चाहता था । विचारण न्यायालय ने ऐसा करने से इनकार कर दिया । अत: यह प्रकीर्ण अपील फाइल की गई ।

2. क्या इस न्यायालय को निचले न्यायालय द्वारा प्रयोग किए गए न्यायिक विवेकाधिकार में मध्यक्षेप करना चाहिए या निचले न्यायालय

द्वारा विशिष्ट प्रकार से प्रयोग किए गए न्यायिक विवेकाधिकार में हस्तक्षेप करने से इनकार कर देना चाहिए ?

II. तथ्य :

3. सभी 11 अपीलार्थी गोवा के मापुसा के वरिष्ठ वर्ग न्यायाधीश के न्यायालय के समक्ष फाइल किए गए 2019 के विशेष सिविल वाद संख्या 62 में वादी हैं । उन्होंने घोषणा और व्यादेश के लिए वाद फाइल किया । प्रत्यर्थी प्रतिवादी है । उन प्रत्यर्थियों में से प्रत्यर्थी संख्या 1 से 6 क्रेता हैं और 7 से 12 विक्रेता है । मैं उन्हीं पदनामों का प्रयोग कर रहा हूं, जिन पदनामों का प्रयोग विचारण न्यायालय के समक्ष किया गया था ।

(क) स्वत्व की खोज :

4. वादियों और प्रतिवादियों, दोनों ने इस बात को स्वीकार किया है कि डोरोथी ब्रेगेंज़ा माता थी और सेबेस्टियो ए. ब्रेगेंज़ा (जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है) और जोस लॉरेंस ब्रेगेंज़ा उसके पुत्र थे । उपरोक्त विधवा माता और उसके दोनों पुत्रों ने वादग्रस्त संपत्ति को तारीख 6 मई, 1975 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा क्रय किया था । डोरोथी की चार पुत्रियां और तीन पुत्र थे ।

5. तथापि, विक्रय विलेख से यह स्पष्ट होता है कि डोरोथी के पास उसके जीवनकाल के दौरान संपत्ति के भोगाधिकार के अधिकार थे और उसके दोनों जीवित पुत्रों के पास संपत्ति के आत्यंतिक स्वामित्व के अधिकार थे । अतः, डोरोथी की मृत्यु के पश्चात् सेबेस्टियो के बच्चों और जोस लॉरेंस और उसकी पत्नी ने आत्यंतिक रूप से संपत्ति के स्वामी होने का दावा करते हुए प्रत्यर्थियों को तारीख 1 से 6 मार्च, 2018 को संपत्ति का विक्रय कर दिया । उसके पूर्व फरवरी, 2018 में सेबेस्टियो और जोस लॉरेंस के उत्तराधिकारियों ने राजपत्र में एक अधिसूचना प्रकाशित कराई थी, जिसके द्वारा उन्होंने यह घोषणा की थी कि उनके अतिरिक्त डोरोथी के उत्तराधिकार का दावा करने वाला 'कोई अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों या उत्तराधिकारी' शेष नहीं हैं ।

6. यद्यपि संपत्ति मार्च, 2018 में विक्रय की गई थी, फिर भी वादियों का यह प्रकथन है कि उनको इस विक्रय के बारे में मार्च, 2019 में अर्थात् एक वर्ष के पश्चात् जानकारी प्राप्त हुई थी । अतः, उनमें से एक अर्थात् प्रथम वादी ने इस संपत्ति का अन्य लोगों के साथ सह-स्वामी होने का दावा करते हुए प्रतिवादी संख्या 7 से 12 को विधिक सूचना जारी की । यह सत्य है कि उसी माह में उन प्रतिवादियों ने वादी के सह-स्वामित्व के दावे से इनकार करते हुए अधिसूचना का उत्तर दिया । अगस्त, 2019 में वादियों ने वाद फाइल कर दिया ।

(ख.) वादी द्वारा ईप्सित अनुतोष :

घोषणा

(क) इस बाबत घोषणा की जाए कि तारीख 23 मार्च, 2018 को निष्पादित वादग्रस्त विक्रय विलेख अवैध है, विधि की दृष्टि में दूषित है और उसमें अन्य अनेक त्रुटियां हैं ;

(ख) इस बाबत घोषणा की जाए कि तारीख 8 फरवरी, 2018 का वादग्रस्त उत्तराधिकार के विरासत का विलेख अवैध है, विधि की दृष्टि में दूषित है और उसमें अनेक त्रुटियां है ;

(ग) प्रपत्र । और XIV में – नामांतरण कार्यवाहियों को अपास्त किया जाए ;

(घ) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को वादग्रस्त संपत्ति में कोई निर्माण या विकास कार्य करने से निषिद्ध किया जाए ;

(ड.) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को संपत्ति की प्रवृत्ति को किसी भी प्रकार से प्रवर्तित किए जाने से निषिद्ध किया जाए ;

(च) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को किसी भी प्रकार से वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में तृतीय पक्ष के अधिकार सृजित करने से निषिद्ध किया जाए;

(छ) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को वादग्रस्त संपत्ति

में निर्मित क्षेत्र/दुकानों/फ्लैट/अपार्टमेंट को विक्रय किए जाने के प्रयोजनार्थ किसी करार/लिखत में प्रविष्ट होने से निषिद्ध किया जाए ;

(ज) प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और अन्य को आज्ञापक व्यादेश द्वारा 'वादग्रस्त संपत्ति में किए गए निर्माण कार्य को ढहाए जाने या हटाए जाने और उस निर्माण के नीचे स्थित भूमि को उसकी मूल स्थिति में पुन: बहाल किए जाने के लिए निदेशित किया जाए' ।

(ग) अंतर्वर्ती आवेदन :

7. वादियों ने उपरोक्त अनुतोषों की ईप्सा करने के अतिरिक्त सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39 नियम 1 के अधीन अंतरिम व्यादेश के लिए आवेदन किया । वादियों द्वारा जो अंतरिम आदेश ईप्सित हैं, इस प्रकार है :–

"वाद के लंबन के दौरान प्रतिवादी संख्या 1 से 6

(क) कोई निर्माण कार्य नहीं करेंगे ;

(ख) वादग्रस्त संपत्ति की प्रकृति को प्रवर्तित नहीं करेंगे ;

(ग) वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में किसी तृतीय पक्ष के अधिकार सृजित नहीं करेंगे ;

(घ) वादग्रस्त संपत्ति में निर्मित क्षेत्रों/दुकानों/फ्लैटों/अपार्टमेंट के विक्रय के लिए किसी करार/लिखत में प्रविष्ट नहीं होंगे ।"

अंतिम अनुतोष (ङ.) इस आज्ञापक अंतरिम निर्देश के जारी किए जाने के प्रयोजनार्थ है कि प्रतिवादी संख्या 1 से 6 उस निर्माण को 'ढहा देंगे और हटा देंगे' जिसे वादग्रस्त संपत्ति पर किया गया है और भूमि की वास्तविक स्थिति को बहाल कर देगी ।

III. विचारण न्यायालय का अधिमत

8. विचारण न्यायालय ने उपरोक्त विवाद्यकों को विधिक के तीन

प्रमुख सिद्धांतों में परिवर्तित कर दिया, जो कोई अंतरिम व्यादेश पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ किसी न्यायनिर्णयन में अंतर्वलित होते हैं, जो निम्नलिखित हैं :–

(क) क्या वादियों ने प्रथमदृष्टया मामला स्थापित कर दिया है ?

(ख) क्या सुविधा का संतुलन उनके पक्ष में है ? और

(ग) यदि उनके पक्ष में कोई व्यादेश प्रदान नहीं किया गया, तो क्या उनको अपूर्णनीय क्षति का सामना करना पड़ेगा ?

निश्चित रूप से विचारण न्यायालय ने अंतिम विवाद्यक को विरचित करते हुए इस बात पर विचार किया कि क्या वादियों की हानि की क्षतिपूर्ति, यदि वादी उस हानि को साबित कर पाते हैं, धन के द्वारा की जा सकती है ।

IV. विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष :

9. विचारण न्यायालय ने तारीख 20 दिसंबर, 2019 को पारित अपने आदेश के द्वारा यह अभिनिर्धारित किया :–

(क) यद्यपि वादियों ने तारीख 6 मई, 1975 के मूल विक्रय विलेख का दृढ़तापूर्वक अवलंब लिया है, फिर भी उन्होंने इस दस्तावेज को प्रस्तुत नहीं किया है । इसलिए, उनके विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए ।

(ख) वादियों ने मार्च, 2019 में विधिक सूचना जारी की थी, किंतु उन्होंने वाद फाइल किए जाने के प्रयोजनार्थ अभी तक प्रतीक्षा की । जिसके परिणामस्वरूप प्रतिवादी संख्या 1 से 6 ने इस संपत्ति पर सारभूत रकम व्यय कर दी और भवन की अवसंरचना खड़ी कर दी । ये प्रतिवादी सद्भाविक क्रेता भी प्रतीत होते हैं । वादी के पक्ष में प्रथमदृष्ट्या कोई स्वत्व न पाए जाने के कारण इस न्यायालय के लिए यह प्रज्ञावान नहीं होगा कि प्रतिवादियों के विरुद्ध कोई व्यादेश पारित किया जाए ।

(ग) वादियों को किसी अपूर्णनीय क्षति का सामना भी नहीं करना पड़ेगा क्योंकि उनकी हानि, यदि कोई हुई हो, तो उसकी क्षतिपूर्ति धन के द्वारा सदैव की जा सकती है । इसके विपरीत प्रतिवादी संख्या 1 से 6 को भवन निर्माताओं के रूप में अत्यधिक हानि बर्दाश्त करनी होगी, जो उन्होंने पहले ही व्यय कर दी है ।

10. याचियों/वादियों के विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री जे. ई. कोएल्हो और प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों संख्या 7 से 12, जो संपत्ति के विक्रेता हैं, के विद्वान् काउंसेल श्री पंकज वर्णेकर को सुना ।

11. वास्तव में दोनों ही विद्वान् काउंसेलों ने मामले पर विस्तारपूर्वक दलीलें दीं । फिर भी मैं उन दलीलों को प्रत्युत्पादित किए जाने के द्वारा इस निर्णय के पृष्ठों को बढ़ाना नहीं चाहता । अत: मैं उनकी दलीलों को तभी निर्दिष्ट करुंगा, जब ऐसा किया जाना उचित हो ।

IV. चर्चा :

(क) न्यायिक विवेकाधिकार और मध्यक्षेप :

12. यह अपील विचारण न्यायालय के उस आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा अंतरिम व्यादेश प्रदान किए जाने से इनकार कर दिया गया था । विचारण न्यायालय ने अंतरिम व्यादेश प्रदान किए जाने से इनकार करने के द्वारा अपने विवेकाधिकार का प्रयोग विशिष्ट रीति में किया है । तथापि, वादियों की यह शिकायत है कि विचारण न्यायालय को अपने विवेकाधिकार का प्रयोग उनके पक्ष में - अन्य रीति में करना चाहिए था । ऐसे मामले में क्या यह न्यायालय मध्यक्षेप कर सकता है ? हां, कर सकता है । किंतु प्रश्न यह उद्भूत होता है कि क्या इस न्यायालय को मध्यक्षेप करना चाहिए ?

13. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **वांडर लिमिटेड** बनाम **एंटॉक्स इंडिया (प्राइवेट) लिमिटेड**[1] वाले मामले में तथ्यों के आधार पर यह

---

[1] (1990) सप्ली. एस. सी. सी. 727.

उल्लेख किया है कि उच्च न्यायालय का खंड न्यायपीठ के समक्ष फाइल अपील एकल न्यायाधीश द्वारा अंतरिम व्यादेश प्रदान किए जाने के विवेकाधिकार के प्रयोग के विरुद्ध फाइल की गई थी । जैसाकि माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया है, ऐसी अपीलों में अपील न्यायालय प्राथमिक न्यायालय द्वारा प्रयोग किए गए विवेकाधिकार में मध्यक्षेप नहीं करेगा और अपने स्वयं के विवेकाधिकार से प्रतिस्थापित नहीं करेगा, जब तक कि प्राथमिक न्यायालय ने अपने वैवेकिक अधिकार का प्रयोग मनमानेपूर्ण, सनकपूर्ण या तर्क विरुद्ध रीति में न किया हो । माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस बात का भी उल्लेख किया है कि यदि प्राथमिक न्यायालय ने अंतर्वर्ती व्यादेशों को प्रदान किए जाने से इनकार किए जाने को विनियमित करने वाले स्थिरीकृत विधि के सिद्धांतों का अनदेखा किया है, तो यह अपील न्यायालय को मध्यक्षेप करने का आधार उपलब्ध कराना होगा, किंतु अन्यथा नहीं । विवेकाधिकार के प्रयोग के विरुद्ध फाइल की गई अपील सिद्धांतों पर आधारित अपील होती है ।

14. **वांडर लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में, विशेष रूप से इस मामले में की गई मताभिव्यक्ति में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अपील न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का पुनर्निधारण नहीं करेगा और विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष से भिन्न निष्कर्ष नहीं निकालेगा, यदि विचारण न्यायालय द्वारा निकाला गया है कि निष्कर्ष अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर 'युक्तिसंगत रूप से संभव' निष्कर्ष था । अपील न्यायालय अपील के अधीन मात्र इस आधार पर सामान्यत: कि यदि उसने मामले पर विचारण के प्रक्रम पर विचार किया होता, तो वह किसी विपरीत निष्कर्ष पर पहुंचता, सामान्यत: विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए मध्यक्षेप करने में न्यायानुमत नहीं होगा । यदि विचारण न्यायालय द्वारा विवेकाधिकार का प्रयोग तर्कसंगत और न्यायोचित रूप से किया गया है, तो **वांडर लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में की गई मताभिव्यक्ति के अनुसार अपील न्यायालय द्वारा भिन्न विचार व्यक्त किए जाने का यह अर्थ नहीं होगा कि विचारण

न्यायालय के विवेकाधिकार के प्रयोग में मध्यक्षेप को न्यायसंगत ठहरा दिया गया है ।

15. अतः, अब हमको इस बात पर विचार करना चाहिए कि क्या आक्षेपित आदेश **वांडर लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में अभिनिर्धारित किसी विनिश्चयात्मक विचलन से ग्रसित है ।

(ख) दस्तावेज :

16. इस मुकदमेबाजी में विवाद का जो मुख्य कारण है, वह तारीख 6 मई, 1975 का विक्रय विलेख है । इस विक्रय विलेख में तीन क्रेता हैं : **डोरोथी ब्रेगेंज़ा, सेबेस्टियो ए. ब्रेगेंज़ा** (जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है) और **जोस लॉरेंस ब्रेगेंज़ा ;** अर्थात् माता और उसके दो पुत्र । निर्विवाद रूप से डोरोथी के चार पुत्रियां और तीन पुत्र थे । वादी डोरोथी की ज्येष्ठतम पुत्री स्वर्गीय इडोसियाना ब्रेगेंज़ा गॉडिन्हो के बच्चे हैं ।

(ग) दस्तावेजों का प्रस्तुतीकरण न किया जाना :

17. वादियों ने 1975 के विक्रय विलेख के बाबत अभिवचन किया ; वास्तव में, उनको इस दस्तावेज के आधार पर अपने अधिकार की जानकारी हुई थी । किंतु उन्होंने इस दस्तावेज को प्रस्तुत नहीं किया । प्रतिवादियों ने दस्तावेजों के प्रस्तुत न किए जाने के आधार पर वादियों की विफलता के कारण उन पर आक्रमण किया है और इसी कारण विचारण न्यायालय यह निष्कर्ष निकालने के लिए आनत हुआ कि यह संभव है कि वादियों द्वारा दस्तावेजों को जानबूझकर प्रस्तुत न किया हो, क्योंकि इन दस्तावेजों को प्रस्तुत किए जाने के कारण उनका पक्षकथन प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकता था ।

18. मैं इस संबंध में यह उल्लेख करता हूं कि दोनों पक्ष अंतर्वर्ती प्रक्रम पर वाद का सामना कर रहे थे और उस प्रक्रम पर दस्तावेज वर्ष 1975 से संबंधित था । प्रतिवादी संख्या 7 से 12 ने वादियों द्वारा दी गई विधिक सूचना के उत्तर के साथ उस विक्रय विलेख की प्रति वादियों को भेजी थी । वह प्रति एक अन्य प्रति की ही प्रति थी, जैसीकि दलील

वादियों द्वारा दी गई है । चाहे कुछ भी कहा गया हो और किया गया हो, मैं विचारण न्यायालय द्वारा वादी के विरुद्ध कोई प्रतिकूल निष्कर्ष निकाले जाने का कोई अवसर नहीं पाता, क्योंकि दस्तावेज अन्यथा रूप से अभिलेख पर उपलब्ध हैं ।

19. यह सत्य है कि सिविल प्रक्रिया संख्या के आदेश 7, नियम 14(1) की अपेक्षा है कि वादी न्यायालय के समक्ष वादपत्र प्रस्तुत करते समय वे दस्तावेज प्रस्तुत करें, जिनका वह अवलंब ले रहा है और उपनियम (2) उनको यह अनुज्ञा प्रदान करता है कि वे ऐसे किसी भी दस्तावेज का विवरण प्रस्तुत करें, जो उनके कब्जे में नहीं है । हमारे द्वारा इस पहलू का सूक्ष्मतापूर्वक परीक्षण किए जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि प्रतिवादियों ने स्वयमेव ही इस विक्रय विलेख की सत्यापित प्रति को विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर दिया है । मैं इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए इस बात का उल्लेख करता हूं कि विचारण न्यायालय उस दस्तावेज की प्रकृति पर प्रथमदृष्ट्या अपना विचार व्यक्त कर सकता था । दोनों पक्ष इस बाबत सहमत हैं कि यह दस्तावेज प्रस्तुत मामले का आधार है । इसलिए, मैं वादियों द्वारा इस दस्तावेज को छुपाए जाने के बाबत विचारण न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्ति का आश्रय लेता हूं जो मत धारणा पर आधारित है और समयपूर्व भी है ।

20. इसके अतिरिक्त कपट के प्रश्न पर विधिक प्रतिपादना, जैसीकि मताभिव्यक्ति माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **एस. पी. चेंगालवाराया नायडू** बनाम **जगन्नाथ**[1] वाले मामले में की गई है और जिसका अवलंब प्रतिवादियों द्वारा लिया गया है, इस मामले में लागू नहीं होती । मैं स्पष्ट करता हूं कि इस मामले में दस्तावेज को अभिकथित रूप से छुपाए जाने और उसको प्रस्तुत न किए जाने के प्रश्न का निर्धारण का यह उपयुक्त समय नहीं है ; अभी यह उपयुक्त प्रक्रम नहीं है ।

21. यह सत्य है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने **गुजरात**

---

[1] (1994) 1 एस. सी. सी. 1.

बोटलिंग कंपनी लिमिटेड बनाम **कोका कोला कंपनी**[1] वाले मामले में उन परिस्थितियों का उल्लेख किया है, जिनके अंतर्गत किसी पक्ष को वाद में किसी साम्यापूर्ण अनुतोष को प्रदान किए जाने का हकदार नहीं माना जाता । सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39 के अधीन अंतर्वर्ती आदेश या अस्थायी व्यादेश के आदेश में मध्यक्षेप किए जाने की न्यायालय की अधिकारिता शुद्धतः साम्या पर आधारित अधिकारिता होती है और इसलिए यदि कोई पक्ष न्यायालय की शरण लेता है, तो न्यायालय उस पक्ष के संबंध में अन्य बातों के अलावा उसके द्वारा न्यायालय की अधिकारिता का अवलंब लिए जाने के प्रयोजनार्थ उसके आचरण पर भी विचार करेगा और मध्यक्षेप करने से इनकार कर देगा जब तक कि उसका आचरण दोषी पाए जाने योग्य न पाया जाए । इस बाबत कोई त्रुटि नहीं पाई जा सकती कि यह प्रकथन **गुजरात बोटलिंग कंपनी लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में किया गया न्यायिक प्रकथन है । किंतु अब यह प्रश्न शेष रह जाता है कि क्या वह प्रतिपादना इस मामले में लागू होगी ? मुझे भय है कि लागू नहीं होगी । हमें किसी भी ऐसे दस्तावेज के संबंध में कपट की अवधारणा नहीं बनानी चाहिए, जिसको किसी एक पक्ष द्वारा निर्दिष्ट तो किया गया हो किंतु प्रस्तुत न किया गया हो, जब कि दस्तावेज अभिलेख पर उपलब्ध हो और उसके अन्य पक्ष द्वारा संवीक्षा के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत किया गया हो । किसी भी स्थिति में विचारण के दौरान कपट के अभिकथन को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ के दृढ़ सबूत की आवश्यकता होती है ।

(घ) 1975 के विक्रय विलेख की प्रकृति :

22. वादियों का यह दावा है कि **डोरोथी** संपत्ति की सहस्वामिनी थी और उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके सभी बच्चे और उन बच्चों के उत्तराधिकारियों ने उसकी संपदा का उत्तराधिकार प्राप्त किया था । इस संदर्भ में श्री परेरा ने दलील दी कि 1975 के दस्तावेज में आरंभ में ही यह घोषणा की गई है कि इस दस्तावेज के द्वारा किया गया विक्रय

---

[1] (1995) 5 एस. सी. सी. 545.

सभी तीनों क्रेताओं के पक्ष में किया गया आत्यंतिक विक्रय था । विचार-विमर्श में व्यक्तिगत रूप से भागीदारी के दौरान यदि किसी बात पर अनुपस्थित पाई गई, तो हम यह उपधारणा करेंगे कि सभी तीनों क्रेताओं ने समान रूप से अपना-अपना योगदान दिया । उन्होंने विक्रय विलेख को स्वीकार किया है, सहस्वामियों में से एक सहस्वामी के अधिकार को मात्र जीवनकाल के दौरान अधिकार – भोगाधिकार तक सीमित नहीं रखा है ।

23. इसके विपरीत प्रत्यर्थी संख्या 1 से 6 की ओर से उपस्थित श्री वर्णेकर ने दलील दी कि विक्रय विलेख के अंतर्गत मां और उसके दो पुत्रों के पृथक्-पृथक् आधिकारों का स्पष्टत: उल्लेख किया गया है, यद्यपि उनको सहक्रेताओं के रूप में वर्गीकृत किया गया है । उनके अनुसार पुर्तगाल की सिविल संहिता संपत्ति में भोगाधिकार को मान्यता प्रदान करती है । इसके अतिरिक्त श्री वर्णेकर ने यह दलील भी दी कि विक्रय विलेख एकपक्षीय दस्तावेज नहीं होता ; यहां तक कि क्रेता भी उसको हस्ताक्षरित करते हैं । यह दस्तावेज स्पष्ट करता है और इस बात पर जोर देता है कि डोरोथी ने अपने जीवनकाल के दौरान केवल अपने भोगाधिकार को स्वीकार किया था ।

24. अब हम 1975 के विक्रय विलेख में लिखित वृत्तांत पर विचार करते हैं : इस विक्रय विलेख का एक पक्ष, जो संपत्ति का विक्रेता है और दूसरा पक्ष '(1) डोरोथी ब्रेगेंज़ा ..., (2) श्री सेबेस्टियो ए. ब्रेगेंज़ा..., (3) श्री लॉरेंस ब्रेगेंज़ा ....है, (जिनको इसमें इसके पश्चात् क्रेता कहा गया है) हैं । इस विलेख में यह वृत्तांत समाविष्ट है कि 'विक्रेता क्रेता को उक्त संपत्ति का आत्यंतिक रूप से ... रुपए के प्रतिफल के बदले विक्रय करने के लिए सहमत हो गया है ... और क्रेता उस संपत्ति का क्रय करने के लिए सहमत हो गए हैं ....।'

25. हम विक्रय विलेख में समाविष्ट प्रथम वृत्तांत के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि हिताधिकारी स्वामी के रूप में विक्रेता समस्त भारों से मुक्त उस समस्त संपत्ति, जिसको विक्रय विलेख में दर्शित और पूर्णरूपेण वर्णित किया गया है, विक्रय द्वारा क्रेताओं को या

उनके द्वारा उपयोग के लिए....... के पक्ष में एतद्द्वारा हस्तांतरण, अंतरण या समनुदेशन नहीं करता :–

> "क्रेताओं ने डोरोथी ब्रेगेंज़ा के जीवनकालीन भोगाधिकारी होने के नाते और क्रेताओं सेबेस्टियो ब्रेंगेज़ा और लॉरेंस ब्रेंगेज़ा के पक्ष में बिना किसी भोगाधिकार के वादग्रस्त सम्पत्ति को (...) समस्त हितलाभों और अधिकारों, स्वत्व, हित, दावा और उनके साथ जुड़े हुए समस्त लाभों और विशेषाधिकारों के साथ विक्रय विलेख की समस्त अंतर्वस्तुओं ..."

26. इसके पश्चात्वर्ती पैरा में समाविष्ट वृत्तांत इस प्रकार है, 'और यह कि विक्रेता ने पहले ही क्रेताओं को उक्त संपत्ति का कब्जा सौंप दिया है ताकि वे उस संपत्ति का शांतिपूर्वक प्रयोग और उपभोग क्रेता द्वारा बिना किसी बाधा, मध्यक्षेप, दावे या मांग के बिल्कुल उसी प्रकार से और कर सकें, जैसेकि वह उनकी स्वयं की संपत्ति हो । ...'

27. प्रतिवादियों द्वारा दी गई दलीलों के परिप्रेक्ष्य में मेरा यह विचार है कि वे विक्रय विलेख पर उसी प्रकार से विचार करते हैं जैसाकि उनके विद्वान् काउंसेल द्वारा किया गया है अर्थात् 'संमिश्रित या सारगर्भित' विलेख के रूप में । उनके अनुसार यह दस्तावेज न केवल विक्रेता और क्रेताओं के मध्य मात्र एक विक्रय विलेख है बल्कि इंतजाम का विलेख भी है, जिसके द्वारा विक्रेताओं के मध्य अधिकारों का विनिर्धारण किया गया है : एक क्रेता के कब्जे में एक जीवनकालीन संपदा होनी चाहिए और जो दो अन्य आत्यंतिक संपदाएं हैं, जिनमें जीवनकालीन संपदा समाविष्ट होती है । अब यह तथ्य शेष रह जाता है, जैसाकि उनके द्वारा जोर दिया गया है, एक तरफ विक्रेता और दूसरी तरफ क्रेताओं ने भी दस्तावेज पर हस्ताक्षर किए हैं ।

28. इसके विपरीत वादियों के पास वह अधिकार होगा, जिस पर न्यायालय द्वारा विश्वास किया गया है और जो यह है कि 1975 का विक्रय विलेख कानूनी आज्ञा को आकर्षित करता है, जैसाकि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 11 के अधीन सम्मिलित है : यदि संपत्ति

के अंतरण के मामले में अंतरिती के पक्ष में आत्यंतिक रूप से कोई हित सृजित किया जाता है, तो अंतरण विलेख में इस बाबत कोई विवेकाधिकार समाविष्ट नहीं हो सकता कि अंतरिती को संपत्ति का उपभोग करने का अधिकार केवल किसी विशष्ट तरीके में होना चाहिए । अंतरिती को केवल उसी हित को प्राप्त करने और उसका निस्तारण करने का अधिकार प्राप्त है, जैसेकि इस प्रकार के कोई निर्देश विद्‌यमान नहीं थे ।

29. वास्तव में 1975 के विक्रय विलेख की न्यायिक संवीक्षा अपेक्षित है । किंतु यह मामला न्यायालय द्‌वारा विचार किए जाने वाला मामला है । यही अनुच्छेद 2197, 2207 और 2241 का प्रभाव है और यदि वह प्रभाव लागू होता है, तो वह पुर्तगाल सिविल संहिता होगा ।

30. वास्तव में, प्रतिवादी संख्या 1 से 6 ने **फ्रांसिसको डी. रोसेरियो फेरारो** बनाम **पांडुरंग शिवराम**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्‌वारा दिए गए निर्णय के पैरा 1 से 6 का अवलंब लिया है । यद्‌यपि उस मामले में, एक व्यक्ति को दस्तावेजी व्ययन के द्‌वारा 'संपत्ति उसके जीवनकाल के दौरान भोगाधिकार के रूप में' प्राप्त हुई थी । इस न्यायालय ने निर्विवाद रूप से भोगाधिकार के उस अधिकार को 1867 की पुर्तगाल सिविल संहिता से निर्दिष्ट किया और यह अभिनिर्धारित किया कि भोगाधिकार धारण करने वाला कोई व्यक्ति अपने जीवन काल के दौरान केवल तृतीय पक्षकारों के पक्ष में किसी अधिकार का सृजन कर सकता है और उसके परे नहीं । यहां पर संपत्ति का हस्तांतरण विक्रय विलेख के माध्यम से हुआ है और इस संपत्ति के तीन क्रेता हैं, जिनमें से एक भोगाधिकार का उपभोग कर रहा है और भोगाधिकार के समाप्त होने के पश्चात् दो अन्य आत्यंतिक स्वामी भी हैं । इसलिए इस दस्तावेज की यह अपेक्षा है कि विधिक विश्लेषण गहराईपूर्वक किया जाए और अधिकारों की किसी प्रजाति को सिविल संहिता द्‌वारा मान्यता प्रदान किए जाने का यह अर्थ नहीं होगा कि दस्तावेज केवल उसी अधिकार को परावर्तित करते हैं ।

---

[1] 1998 (1) गोवा एल. टी. 138.

(ङ) क्या वादियों ने न्यायालय की शरण विलंब के पश्चात् ली ?

31. विलंब के कारण साम्या की पराजय होती है और कोई भी एक पक्ष व्यादेश, जो कि एक साम्यापूर्ण अनुतोष है, पर विवाद नहीं कर सकता । यहां पर, क्या वादियों का आचरण विलंब या चूकों द्वारा ग्रसित है ।

32. यदि हम मामले के घटनाक्रम पर विचार करें, तो प्रतिवादी संख्या 7 से 12 के पक्ष में 'उत्तराधिकार की अधिसूचना' थी, जिसको फरवरी, 2018 में गोवा सरकार के शासकीय राजपत्र में प्रकाशित किया गया था । यदि हमारे पास इस उत्तराधिकार अधिसूचना के बाबत कहने के लिए एक शब्द भी होता, तो वह विधितः व्यक्ति विनिर्दिष्ट होता, न कि संपत्ति विनिर्दिष्ट । किंतु अधिसूचना में जिस प्रकार से उल्लेख किया गया है उससे यह ज्ञात होता है कि डोरोथी के उत्तराधिकारी केवल प्रतिवादी संख्या 7 से 12 थे । क्या यह एक प्रकार की विसंगति है, जो मामले के गुणागुण को प्रभावित करती है ? हम इस बाबत सहमत हैं कि यह विचारण का मामला है और हमको इस मामले में चर्चा नहीं करनी चाहिए । प्रतिवादी संख्या 7 से 12 ने संपत्ति का विक्रय मार्च, 2018 में कर दिया था । यह विक्रय रजिस्ट्रीकृत लिखत के माध्यम से हुआ था । वादियों ने प्रतिवादी संख्या 7 से 12 के विरुद्ध मार्च, 2019 में अर्थात् एक वर्ष के पश्चात् प्रतिवादियों के विरुद्ध संपत्ति के बाबत अपने दावे को अधिसूचित किया है । निश्चित रूप से प्रतिवादी संख्या 7 से 12 ने उसी माह में तीव्रता के साथ अपना उत्तर प्रस्तुत किया । जैसाकि अभिलेख से दर्शित होता है, क्रेताओं के रूप में वादी संख्या 1 से 6 ने माह अप्रैल और मई में या वर्ष 2019 में समस्त सिविल अनुज्ञाएं अभिप्राप्त कर ली थीं । उन्होंने 2019 के जून या जुलाई में निर्माण आरंभ कर दिया था । वादियों ने अगस्त, 2019 में वाद फाइल किया था ।

33. विचारण न्यायालय ने अंतर्वर्ती आवेदन में तारीख 20 दिसंबर, 2019 को आदेश पारित किया । उस आदेश में यह उल्लेख किया गया कि क्रेताओं द्वारा किया गया निर्माण कार्य पहले ही अत्यधिक अग्रिम प्रक्रम पर पहुंच गया है । प्रस्तुत किए गए फोटोग्राफ, जिनको प्रतिवादी संख्या 1 से 6 द्वारा न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया, के आधार

पर मैं यह अवेक्षित करता हूं कि विशाल निर्माण किया जा चुका है और भवन की संरचना सारभूत रूप से पूर्ण हो चुकी है ।

34. प्रतिवादी संख्या 1 से 6 के अनुसार वादियों ने एक वर्ष से अधिक की अवधि तक उत्तर प्रस्तुत करने की प्रतीक्षा की । यद्यपि राजपत्र की अधिसूचना फरवरी, 2018 में प्रकाशित हो गई थी और उसी वर्ष मार्च में विक्रय विलेख निष्पादित कर दिया गया था, फिर भी वादियों ने प्रतिवादी संख्या 7 से 12 को लगभग एक वर्ष के पश्चात् विधिक सूचना जारी की । चूंकि राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना और विक्रय विलेख के अंतर्गत वादियों को रचनात्मक सूचना भेजे जाने के लिए उपबंधित किया गया था, इसलिए उन्होंने कुछ विलंब से उत्तर दिया । इसलिए विलंब और चूकें कारित हुईं ।

35. मैं इस बाबत सहमत हूं कि इस मामले में विलंब का तत्व विद्यमान है, किंतु इस कारणवश यह नहीं कहा जा सकता कि अधिकारों के अधित्यजन का कारण होने वाली चूकें कारित हुईं । वादियों ने निर्माण आरंभ होने के लगभग दो माह की अवधि के पश्चात् वाद फाइल किया ।

(च) क्या प्रतिवादी सद्भाविक क्रेता हैं ?

(छ) क्या वादी द्वारा बर्दाश्त की गई क्षति के लिए धन पर्याप्त अनुतोष होगा, यदि वे वाद में सफल हो जाते हैं ?

36. अनेक सह-स्वामियों में से कुछ सह-स्वामियों से अभिकथित रूप से क्रय की गई संपत्ति के मामले में सद्भाविक क्रेताओं की संकल्पना उद्भूत नहीं होती ; इसके विपरीत जो संकल्पना लागू होती है, वह निश्चित रूप से क्रेता सावधान वाली संकल्पना है । अधिसंभाव्य रूप से कारित होने वाली विधिक क्षति, जिसके वादी द्वारा बर्दाश्त किए जाने की संभाव्यता है, के संबंध में धन के रूप में प्रतिकर मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है । यहां पर यह अभिनिर्धारित किया जाना समयपूर्व होगा कि इस प्रश्न का विनिर्धारण विचारण के दौरान किया जाना चाहिए ।

V. **निष्कर्ष**

37. मैं अभिनिर्धारित करता हूं कि विचारण न्यायालय ने अपने

न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग किया है और मैं विवेकाधिकार के इस प्रयोग में कोई विधिक शैथिल्य नहीं पाता, जैसाकि **वांडर लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में उल्लेख किया गया है । इसलिए, मैं 2019 के विशेष सिविल वाद संख्या 62 में गोवा के मापुसा स्थित वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश 'बी.' के न्यायालय द्वारा पारित तारीख 20 दिसंबर, 2019 के आक्षेपित आदेश में कोई मध्यक्षेप करने के लिए आनत नहीं हूं ।

38. मैं यह भी अभिनिर्धारित करता हूं कि वादियों को साम्यापूर्ण विचारणाओं के आधार पर अंतरिम व्यादेश प्रदान किए जाने से इनकार किया गया था, न कि गुणागुण के आधार पर । इसलिए, यह निश्चित रूप से उचित मामला है, जो 'लंबित वाद' के सिद्धांत को आकर्षित करता है, जिसे संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 के अधीन कानूनी रूप से मान्यता प्रदान की गई है । इसका अर्थ यह है कि वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में किए गए समस्त विकास कार्य वाद के निर्णय के अध्यधीन होंगे । मैं स्पष्ट रूप से इस बात पर जोर देता हूं और आगे यह अभिनिधारित करता हूं कि विचारण न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश में जो मताभिव्यक्तियां की गई हैं या मैंने इस निर्णय में की हैं, प्रथम दृष्ट्या प्रकृति की हैं और वाद के किसी भी पक्ष के मामले को प्रभावित नहीं करती ।

VI. परिणाम

39. मैं ऊपर की गई मताभिव्यक्तियों को दृष्टि में रखते हुए 2020 के आदेश संख्या 8 से उद्भूत इस अपील को खारिज करता हूं, क्योंकि इसमें मध्यक्षेप अपेक्षित नहीं है । लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जाता ।

अपील खारिज की गई ।

शु.

अशोक कुमार और अन्य

बनाम

रमेश चंद्र और एक अन्य

(2006 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 238)

तारीख 8 जून, 2020

न्यायमूर्ति विवेक सिंह ठाकुर

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47) – धारा 34 – कब्जे के लिए वाद – मुकदमेबाजी के पूर्ववर्ती दौर में प्रतिवादियों के विरुद्ध पारित निष्कासन आदेश – मुकदमेबाजी के द्वितीय दौर में प्रतिवादियों द्वारा शाश्वत व्यादेश के लिए फाइल किया गया वाद, जिसमें प्रतिवादियों को वादग्रस्त भूमि से, विधि की सम्यक् प्रक्रिया के सिवाय, बेदखल करने से वादियों को प्रतिषिद्ध किया जाना – मुकदमेबाजी के तृतीय दौर में प्रतिवादियों के पूर्ववर्ती हिताधिकारी का दावा न्यायालय द्वारा खारिज किया जाना – अत:, वादग्रस्त भूमि के संबंध में वादी का दावा मुकदमेबाजी के पूर्ववर्ती दौरों में पारित आदेशों के सामंजस्य में था, जो अंतिमता प्राप्त कर चुके हैं – वादी के पक्ष में पारित डिक्री उचित है ।

संक्षेप में मामले का तथ्य यह हैं कि मुकदमेबाजी के प्रथम दौर में प्रतिवादियों के विरुद्ध निष्कासन आदेश पारित किया गया था । मुकदमेबाजी के द्वितीय दौर में प्रतिवादियों द्वारा शाश्वत व्यादेश के लिए वाद फाइल किया गया, जिसके द्वारा उनको वादग्रस्त भूमि से, विधि की सम्यक् प्रक्रिया के सिवाय बेदखल, करने से वादियों को प्रतिषिद्ध कर दिया गया था । मुकदमेबाजी के तृतीय दौर में प्रतिवादियों के पूर्ववर्ती हिताधिकारी का दावा न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया । अत:, वादग्रस्त भूमि के संबंध में वादी का दावा मुकदमेबाजी के पूर्ववर्ती दौरों में पारित आदेशों, जो अंतिमता प्राप्त कर चुके हैं, के सामंजस्य में पाया गया । इस प्रकार पक्षों के मध्य वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में मुकदमेबाजी के तीन दौर पूरे हो चुके हैं । मुकदमेबाजी के तृतीय दौर में

प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी के दावे को न्यायालयों द्वारा स्वीकृत किया गया और उक्त निष्कर्ष की पुष्टि उच्चतम न्यायालय द्वारा भी की गई । प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी और परिणामस्वरूप इस न्यायालय द्वारा प्रतिवादियों के पक्ष में 1973 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 47 में पारित आदेश को दृष्टि में रखते हुए यह संरक्षण प्रदान किया गया कि उनको वादग्रस्त भूमि से बेदखल नहीं किया जाएगा, सिवाय विधि के अंतर्गत उपलब्ध सम्यक् प्रक्रिया को अपनाए जाने के द्वारा । इसलिए, प्रतिवादियों के विरुद्ध पारित आक्षेपित निर्णयों द्वारा निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष और वादियों के पक्ष में और प्रतिवादियों के विरुद्ध वादग्रस्त भूमि के कब्जे के संबंध में डिक्री का पारित किया जाना मुकदमेबाजी के पूर्ववर्ती दौर और उन मुकदमों में विभिन्न न्यायालयों द्वारा उद्घोषित निर्णयों के सामंजस्य में है, जिनको वर्तमान में अंतिमता प्राप्त हो चुकी है । यद्यपि, अभिलेख पर यह साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ सामग्री उपलब्ध है कि प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी के विरुद्ध पंजाब सुरक्षा और भूधृति अधिनियम के अधीन सहायक कलेक्टर, ग्रेड-2 द्वारा पारित निष्कासन आदेश कार्यान्वित हो चुका है, किंतु यदि इस बात पर विचार किया जाता है कि इस आदेश को कार्यान्वित नहीं किया गया, तो भी अब प्रतिवादियों को वादियों द्वारा बलपूर्वक बेदखल नहीं किया जा सकता । किंतु वादियों ने विधि के अंतर्गत उनको उपलब्ध अनुक्रम को अंगीकृत करते हुए प्रतिवादियों को बेदखल कर दिया । इसलिए, इस अपील में विरचित विधि के सारभूत प्रश्न पर निकाले गए निष्कर्ष अपीलार्थियों अर्थात् प्रतिवादियों के विरुद्ध लागू किए जाने योग्य हैं और तद्नुसार निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों को मान्य ठहराया जाता है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अत:, यह स्पष्ट है कि मुकदमेबाजी के तृतीय दौर में भी प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी के दावे को न्यायालयों द्वारा स्वीकृत किया गया था और यह सूचित किया गया था कि उक्त निष्कर्ष की पुष्टि उच्चतम न्यायालय द्वारा तारीख 9 जुलाई, 1971 के निर्णय द्वारा की गई थी । प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी और परिणामस्वरूप इस न्यायालय द्वारा प्रतिवादियों को 1973 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 47 में पारित आदेश को दृष्टि में रखते हुए उपलब्ध संरक्षण यह

था कि उनको वादग्रस्त भूमि से बेदखल नहीं किया जाएगा, सिवाय विधि के अंतर्गत उपलब्ध सम्यक् प्रक्रिया को अपनाए जाने के द्वारा । इसलिए, प्रतिवादियों के विरुद्ध पारित आक्षेपित निर्णयों द्वारा निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष और वादियों के पक्ष में और प्रतिवादियों के विरुद्ध वादग्रस्त भूमि के कब्जे के संबंध में डिक्री का पारित किया जाना मुकदमेबाजी के पूर्ववर्ती दौर और उन मुकदमों में विभिन्न न्यायालयों द्वारा उद्घोषित निर्णयों के सामंजस्य में था, जिनको वर्तमान में अंतिमता प्राप्त हो चुकी है । यद्यपि, अभिलेख पर यह साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ सामग्री उपलब्ध है कि प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी के विरुद्ध पंजाब सुरक्षा और भूधृति अधिनियम के अधीन सहायक कलेक्टर, ग्रेड-2 द्वारा पारित निष्कासन आदेश कार्यान्वित हो चुका है, किंतु यदि इस बात पर विचार किया जाता है कि इस आदेश को कार्यान्वित नहीं किया गया, तो भी अब प्रतिवादियों को वादियों द्वारा बलपूर्वक बेदखल नहीं किया जा सकता । किंतु वादियों ने विधि के अंतर्गत उनको उपलब्ध अनुक्रम को अंगीकृत करते हुए प्रतिवादियों को बेदखल कर दिया है । इसलिए, इस अपील में विरचित विधि के सारभूत प्रश्न पर निकाले गए निष्कर्ष अपीलार्थियों अर्थात् प्रतिवादियों के विरुद्ध लागू किए जाने योग्य हैं और तद्नुसार निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों को मान्य ठहराया जाता है । (पैरा 17, 18 और 19)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2006 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 238.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

याचियों की ओर से श्री सुभाष शर्मा

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री नरेश के. ठाकुर और दिव्यराज सिंह

निर्णय

यह अपील **अशोक कुमार और अन्य** बनाम **रमेश चंद्र और एक अन्य** नामक शीर्षक वाले मामले में 2002 की सिविल अपील संख्या 54 में उना के विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 15

फरवरी, 2006 के आक्षेपित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसमें तारीख 7 मई, 2002 को वादियों के पक्ष में और प्रतिवादियों के विरुद्ध वादग्रस्त भूमि के कब्जे के संबंध में तारीख 7 मई, 2002 को उना के विद्‌वान् वरिष्ठ उप न्यायाधीश द्‌वारा **रमेश चंद्र और एक अन्य** बनाम **दलीप कुमार और अन्य** नाम शीर्ष वाले मामले में 1992 के वाद संख्या 153 में पारित निर्णय और डिक्री की पुष्टी कर दी गई थी ।

2. हमारे समक्ष उपस्थित अपील में अपीलार्थी मूल प्रतिवादियों **दलीप कुमार** और **ईशर दास** के हित उत्तराधिकारी हैं और उनको इसमें इसके पश्चात् प्रतिवादियों के रूप में निर्दिष्ट किया जाएगा ।

3. वादीयों, जो इस अपील में प्रत्यर्थी हैं, परमोध सिंह पुत्र दलीप सिंह के हित उत्तराधिकारी हैं और उनको इस अपील में वादियों के रूप में निर्दिष्ट किया गया है ।

4. मैंने पक्षों के विद्‌वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना और अभिलेख का सूक्ष्मतापूर्वक विश्लेषण किया ।

5. यह अपील तारीख 20 सितंबर, 2006 को विधि के निम्नलिखित सारभूत प्रश्नों के आधार पर विचारार्थ ग्रहण की गई थी :-

> "क्या निचले दोनों न्यायालयों द्‌वारा पारित निर्णय उनके द्‌वारा मुदकदमेबाजी के पूर्ववर्ती दौर में निकाले गए इन निष्कर्षों पर विचार न किए जाने के कारण दूषित हैं कि यद्‌यपि निष्कासन का आदेश पंजाब सुरक्षा और भूधृति अधिनियम के अधीन पारित किया गया था, फिर भी उस आदेश का कार्यान्वयन इस आधार पर नहीं किया गया कि अपीलार्थियों को प्रश्नगत भूमि से भौतिक रूप से निष्कासित नहीं किया गया था ?"

6. निचले विचारण न्यायालय में फाइल किए गए सिविल वाद में वर्तमान मामले की विषयवस्तु तहसील और जिला उना के रोरावलीवाल ग्राम में स्थित खसरा संख्या 4600, 5019, 5279 और 5296 थे । चकबंदी कार्यान्वयनों के पश्चात् वादी और अन्य स्वामियों के नामों में पृथक् खेवट तैयार किए गए थे और वर्तमान खसरा संख्याओं को पुराने खसरा संख्या 4302 न्यूनतम, 4502 न्यूनतम, 4741 न्यूनतम, 4742 न्यूनतम और 4739/1 न्यूनतम के रूप में सृजित किया गया था और

वर्ष 1977-78 के लिए उनकी प्रविष्टि मिस्सल हकीयत इतेमाल में की गई थी ।

7. यह अविवादित है कि वादियों के हित पूर्वाधिकारी खसरा संख्या 4288, 4302, 4502, 4722, 4739 और 4741 के स्वामी थे, जैसाकि वर्ष 1955-56 के जामाबंदी में अभिलिखित है और उनमें लक्ष्मण, जो प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी थे, का नाम किराएदार के रूप में अभिलिखित था ।

8. अभिलेखों के आधार पर वादग्रस्त भूमि या उसके किसी भी भाग के संबंध में मुकदमेबाजी के तीन दौर का संदर्भ अभिलिखित है ।

9. मुकदमेबाजी के प्रथम दौर में प्रमोद सिंह ने अन्य सहस्वामियों, जो वादियों के हित पूर्वाधिकारी थे, के साथ वर्ष 1955-56 की जामाबंदी के अनुसार खसरा संख्या 4288, 4302, 4502, 4722, 4739 और 4741 के संबंध में उना के सहायक कलेक्टर, ग्रेड-2 के समक्ष पंजाब भूधृति की सुरक्षा अधिनियम की धारा 14-क के अधीन आवेदन संख्या 414-क संस्थित कराया, जिसमें तारीख 9 जुलाई, 1963 के आदेश (प्रदर्श पी. 19) के अनुसार प्रत्यर्थी लक्ष्मण सिंह, जो वादियों के हित पूर्वाधिकारी हैं, को निष्कासित किए जाने का आदेश पारित किया गया था । **लक्ष्मण** बनाम **बसंता और अन्य** नाम शीर्षक वाली 1963 की अपील संख्या 6, जिसे वादियों के हित पूर्वाधिकारी द्वारा फाइल किया गया था, को सहायक कलेक्टर, ग्रेड-1 द्वारा तारीख 30 दिसंबर, 1963 (प्रदर्श पी. 20) के आदेश द्वारा कलेक्टर के रूप में शक्तियों का प्रयोग करते हुए खारिज कर दिया गया था । तत्पश्चात्, रोजनामचा/क्षेत्र के पटवारी की नैत्यिक डायरी रेपट द्वारा तारीख 28 अक्तूबर, 1964 के निष्पादन आवेदन (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए.) द्वारा भूमि का कब्जा उसके स्वामियों अर्थात् वादियों के हित पूर्वाधिकारी को नंबरदार, पंचायत पुलिस के सदस्य, चौकीदार और अन्य की उपस्थिति में हस्तगत कर दिया गया था । कब्जे के आदेश का निष्पादन प्रार्थना-पत्र सहायक कलेक्टर ग्रेड-2 के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, जिसमें तारीख 10 नवंबर, 1964 के आदेश (प्रदर्श पी. 6) द्वारा उसको उसका निष्पादन अभिलिखित किए जाने के पश्चात् मामले की फाइल पर प्रस्तुत कर दिया था । तत्पश्चात्, सहायक कलेक्टर ग्रेड-2 ने तारीख 18 फरवरी, 1965 के आदेश (प्रदर्श

पी. 7) द्वारा मामले की समाप्ति के पश्चात् निष्पादन कार्यवाहियों को बंद कर दिया था और तद्नुसार वर्ष 1965-66 की जमाबंदी (प्रदर्श पी. 9) के अनुसार वादग्रस्त भूमि को उसके स्वामियों अर्थात् वादियों के हित पूर्वाधिकारियों के कब्जे के अंतर्गत अभिलिखित किया गया था ।

10. मुकदमेबाजी के दूसरे दौर में प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी लक्ष्मण द्वारा 1968 का सिविल वाद संख्या 239 फाइल किया गया था । उक्त वाद प्रतिवादियों (वादियों के हित पूर्वाधिकारी) को लक्ष्मण को खसरा संख्या 4740, 4271, 4288, 4302, 4502, 4722, 4739, 4741 और 6485/4261 से दखल के साथ स्वामी होने का दावा करते हुए बलपूर्वक बेदखल करने से प्रतिषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ शाश्वत व्यादेश के लिए फाइल किया गया था । उक्त वाद उना के विद्वान् उप न्यायाधीश, ग्रेड-1 द्वारा तारीख 29 अप्रैल, 1971 के निर्णय (प्रदर्श पी. 3) द्वारा खारिज कर दिया गया था । इस वाद में विरचित किया गया विवाद्यक संख्या 4 इस प्रकार था :–

> "क्या वादी को राजस्व न्यायालय के आदेश के मतावलंबन में वादग्रस्त भूमि से निष्कासित किया गया था, जैसाकि अभिकथित किया गया है ? यदि हां तो इसके प्रभाव ।"

11. विद्वान् उप न्यायाधीश ने इस विवाद्यक का निस्तारण करते हुए अपने निष्कर्ष में अभिनिर्धारित किया कि वादी (लक्ष्मण) ने स्वयमेव अपनी प्रतिपरीक्षा में उसके विरुद्ध निष्कासन की डिक्री पारित किए जाने के तथ्य को स्वीकार किया था और इसलिए उसकी इस स्वीकारोक्ति को ध्यान में रखते हुए इस विवाद्यक को लक्ष्मण, प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी, के विरुद्ध निर्णीत किया गया था ।

12. लक्ष्मण द्वारा फाइल की गई अपील को भी उना के विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 23 अप्रैल, 1973 (प्रदर्श पी. 12) के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था । विद्वान् जिला न्यायाधीश ने इस निर्णय में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा 1958 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 693 में पारित तारीख 16 मई, 1966 के निर्णय और डिक्री (उस मामले में संलग्नक डी. 1 और डी. 2) को निर्दिष्ट किया था और उसके आधार पर उन्होंने यह अभिनिर्धारित किया था कि सात खसरा संख्याओं 4271, 4288, 4302, 4502, 4722, 4739 और

4741 के संबंध में दखल के साथ स्वामित्व के संबंध में विवाद्यक का अंततः निपटारा हो गया था और इसलिए पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए वे निष्कर्ष इन सात खसरा संख्याओं के संबंध में पूर्व आदेश की भांति क्रियान्वित होंगे । ये सभी खसरा संख्याएं प्रथम दौर की मुकदमेबाजी की विषयवस्तु थीं । इस निर्णय में विद्वान् जिला न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया था कि पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय खसरा संख्या 4740 और 6485/4261 के संबंध में पूर्व आदेश की भांति क्रियान्वित नहीं होगा । विद्वान् जिला न्यायाधीश ने विवाद्यक संख्या 4 के संबंध में विद्वान् उप न्यायाधीश द्वारा निकाले गए निष्कर्षों को भी वादियों के हित पूर्वाधिकारी के अभिवाक् को मान्य ठहराए जाने के प्रयोजनार्थ अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री की अनुपलब्धता के कारण पलट दिया था । तथापि, वादग्रस्त भूमि पर स्वामित्व के संबंध में प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी लक्ष्मण सिंह के दावे के बाबत विद्वान् उप न्यायाधीश के आदेश को विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया था ।

13. ऊना के विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 23 अप्रैल, 1973 के निर्णय के विरुद्ध 1973 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 47 फाइल की गई थी । इस अपील में उच्च न्यायालय ने तारीख 2 अप्रैल, 1985 के निर्णय (प्रदर्श पी. 4) द्वारा विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को इस सीमा तक उपांतरित कर दिया था कि शाश्वत व्यादेश के लिए डिक्री प्रतिवादियों (वादियों के हित पूर्वाधिकारी) को वादियों (प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी) को वादग्रस्त भूमि से विधि के अंतर्गत सम्यक् प्रक्रिया के सिवाय बलपूर्वक बेदखल किए जाने से प्रतिषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ पारित की गई थी ।

14. पूर्वोक्त मुकदमेबाजी का परिणाम यह हुआ कि प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारियों का वादग्रस्त भूमि का स्वामित्व अर्जित करने का दावा अस्वीकृत कर दिया गया, किंतु उनका कब्जा संरक्षित बना रहा और वादियों के हित पूर्वाधिकारी को प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी को वादग्रस्त भूमि से, सिवाय विधि के अंतर्गत उपलब्ध अनुक्रम के, बेदखल करने से प्रतिषिद्ध कर दिया गया ।

15. मुकदमेबाजी का तृतीय दौर वादियों के हित पूर्वाधिकारी और

प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी के मध्य नहीं बल्कि भगवान दास (क्रेता) नामक व्यक्ति, जिसने वादग्रस्त भूमि अर्थात् वादियों के पूर्वजों में से एक पूर्वज बसंता से वादग्रस्त भूमि का एक भाग क्रय किया था और प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी लक्ष्मण के मध्य था । उपरोक्त भगवान दास ने वादग्रस्त भूमि के एक भाग, जिसकी माप 14 कनाल 8 मरला थी और जो खसरा संख्या 4271 और 4288 में समाविष्ट था, के संबंध में 1973 का सिविल वाद संख्या 486 फाइल किया था और भूमि का यह भाग मुकदमेबाजी के प्रथम और द्वितीय दौर की विषयवस्तु थी । यह वाद भूमि के स्वत्व के आधार पर कब्जे के लिए फाइल किया गया था । इस वाद को तारीख 15 जून, 1977 के निर्णय और डिक्री (प्रदर्श पी. 17) द्वारा डिक्री कर दिया गया था । इस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई अपील को विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 15 नवंबर, 1979 को खारिज कर दिया गया था । तत्पश्चात् इस उच्च न्यायालय द्वारा 1979 की द्वितीय अपील संख्या 170 को भी तारीख 27 नवंबर, 1990 के निर्णय (प्रदर्श पी. 16) द्वारा खारिज कर दिया गया था ।

16. इस उच्च न्यायालय द्वारा 1973 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 47 में प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी के पक्ष में प्रदान किए गए संरक्षण पर भी 1979 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 170 के विनिश्चय के समय विचार किया गया था । इस अपील में मुकदमेबाजी के प्रथम दौर पर विचारोपरांत इस न्यायालय ने जो मताभिव्यक्ति की, वह निम्नलिखित है :-

> "…. भूमि के मूल स्वामी बसंता ने तारीख 14 दिसंबर, 1962 को उना के सहायक कलेक्टर, द्वितीय ग्रेड के समक्ष पंजाब भूधृत्ति की सुरक्षा अधिनियम के उपबंधों के अधीन याचिका फाइल करते हुए प्रतिवादियों के पूर्वज लक्ष्मण सिंह के निष्कासन की ईप्सा की थी । लक्ष्मण सिंह के विरुद्ध तारीख 9 जुलाई, 1963 का निष्कासन आदेश (प्रदर्श पी. 5, जो इस अपील में प्रदर्श पी. 19 है) पारित किया गया था । इस आदेश को गढ़शंकर के सहायक कलेक्टर, प्रथम ग्रेड के समक्ष कलेक्टर की शक्तियों का प्रयोग करते हुए अपील में चुनौती दी गई थी और सहायक आयुक्त, प्रथम ग्रेड ने 30 दिसंबर, 1963 के आदेश (प्रदर्श पी. 6, जो इस अपील में प्रदर्श

पी. 20 है) द्वारा इस अपील को खारिज कर दिया था । निष्कासन के वारंट पर प्रस्तुत की गई रिपोर्ट की प्रति, जो प्रदर्श पी. 8 है दर्शित करती है कि लक्ष्मण सिंह को वास्तव में तारीख 28 अक्तूबर, 1964 को बेदखल किया गया था और बसंता को संपत्ति का कब्जा प्रदान किया गया था । प्रदर्श पी. 9 (जो इस अपील में प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए. है), जो रोजनामचा वकीयती पटवारी है, में लक्ष्मण सिंह की वास्तविक बेदखली का तथ्य अभिलिखित है । प्रदर्श पी. 7 (जो इस अपील में प्रदर्श पी. 6 है) उना के तहसीलदार द्वारा पारित तारीख 10 नवंबर, 1964 के आदेश की नकल है, जिसके द्वारा बसंता द्वारा फाइल की गई निष्पादन याचिका को पूर्ण संतुष्टि अभिलिखित किए जाने के पश्चात् खारिज कर दिया गया था । प्रदर्श पी. 10 खसरा गिरदावारी में प्रविष्टि की नकल है, जिसमें निष्कासन आदेश के मतावलंबन में लक्ष्मण सिंह की वास्तविक बेदखली के आधार पर वर्ष 1964 की रबी की फसल की कटाई के कालम में परिवर्तन दर्शित किया गया है । दस्तावेजी साक्ष्य और उसके साथ वादी साक्षी 1 के रूप में वादी का कथन पढ़े जाने पर इस बाबत कोई संदेह शेष नहीं रह जाता कि लक्ष्मण सिंह को ग्राम रोरावालीवाल स्थित खसरा संख्या 4288, 4302, 4502, 4722/4739 और 4741 में समाविष्ट भूमि से वास्तव में निष्कासित किया गया था । प्रदर्श पी. 11 बसंता द्वारा चंदू के पुत्र गनियुन, जो लक्ष्मण सिंह का भाई है, के विरुद्ध संस्थित कराए गए वाद में उना के सहायक कलेक्टर, द्वितीय ग्रेड द्वारा तारीख 9 जुलाई, 1963 को पारित एक अन्य आदेश की नकल है, जिसके द्वारा उसी गांव में स्थित खसरा संख्या 4271 और 4502 में समाविष्ट भूमि से लक्ष्मण सिंह के निष्कासन के लिए आदेशित किया गया था ।"

17. अतः, यह स्पष्ट है कि मुकदमेबाजी के तृतीय दौर में भी प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी के दावे को न्यायालयों द्वारा स्वीकृत किया गया था और यह सूचित किया गया था कि उक्त निष्कर्ष की भी पुष्टि उच्चतम न्यायालय द्वारा तारीख 9 जुलाई, 1971 के निर्णय द्वारा की गई थी ।

18. प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी और परिणामस्वरूप इस न्यायालय द्वारा प्रतिवादियों को 1973 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 47 में पारित आदेश को दृष्टि में रखते हुए उपलब्ध संरक्षण यह था कि उनको वादग्रस्त भूमि से बेदखल नहीं किया जाएगा, सिवाय विधि के अंतर्गत उपलब्ध सम्यक् अनुक्रम को अपनाए जाने के द्वारा । इसलिए, प्रतिवादियों के विरुद्ध पारित आक्षेपित निर्णयों द्वारा निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष और वादियों के पक्ष में और प्रतिवादियों के विरुद्ध वादग्रस्त भूमि के कब्जे के संबंध में डिक्री का पारित किया जाना मुकदमेबाजी के पूर्ववर्ती दौर और उन मुकदमों में विभिन्न न्यायालयों द्वारा उद्घोषित निर्णयों के सामंजस्य में था, जिनको वर्तमान में अंतिमता प्राप्त हो चुकी है ।

19. यद्यपि, अभिलेख पर यह साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ सामग्री उपलब्ध है कि प्रतिवादियों के हित पूर्वाधिकारी के विरुद्ध पंजाब सुरक्षा और भूधृति अधिनियम के अधीन सहायक कलेक्टर, ग्रेड-2 द्वारा पारित निष्कासन आदेश कार्यान्वित हो चुका है, किंतु यदि इस बात पर विचार किया जाता है कि इस आदेश को कार्यान्वित नहीं किया गया, तो भी अब प्रतिवादियों को वादियों द्वारा बलपूर्वक बेदखल नहीं किया जा सकता । किंतु वादियों ने विधि के अंतर्गत उपलब्ध अनुक्रम को अंगीकृत करते हुए प्रतिवादियों को बेदखल कर दिया है । इसलिए, इस अपील में विरचित विधि के सारभूत प्रश्न पर निकाले गए निष्कर्ष अपीलार्थियों अर्थात् प्रतिवादियों के विरुद्ध लागू किए जाने योग्य हैं और तद्नुसार निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों को मान्य ठहराया जाता है ।

20. अपील खारिज की जाती है । समस्त लंबित प्रकीर्ण आवेदन, यदि कोई हों, का तद्नुसार निस्तारण किया जाता है । रजिस्ट्री को निर्देशित किया जाता है कि तद्नुसार डिक्री तैयार करें ।

अपील खारिज की गई ।

शु.

संसद् के अधिनियम

राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990

(1990 का अधिनियम संख्यांक 20)

[30 अगस्त, 1990]

राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन करने और उससे संसक्त या उसके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए

अधिनियम

भारत गणराज्य के इक्तालीसवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :-

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

2. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "आयोग" से धारा 3 के अधीन गठित राष्ट्रीय महिला आयोग अभिप्रेत है ;

(ख) "सदस्य" से आयोग का सदस्य अभिप्रेत है और उसके अंतर्गत सदस्य-सचिव भी है ;

(ग) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ।

अध्याय 2

राष्ट्रीय महिला आयोग

3. राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन – (1) केन्द्रीय सरकार, राष्ट्रीय महिला आयोग के नाम से ज्ञात एक निकाय का गठन करेगी जो इस अधिनियम के अधीन उसे प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग और समनुदिष्ट कृत्यों का पालन करेगा ।

(2) यह आयोग निम्नलिखित से मिलकर बनेगा –

(क) केन्द्रीय सरकार द्वारा नामनिर्देशित एक अध्यक्ष, जो महिलाओं के हित के लिए समर्पित हो ;

(ख) केन्द्रीय सरकार द्वारा ऐसे योग्य, सत्यनिष्ठ और प्रतिनिष्ठित व्यक्तियों में से नामनिर्देशित पांच सदस्य जिन्हें विधि या विधान, व्यवसाय संघ आंदोलन, महिलाओं की नियोजन संभाव्यताओं की वृद्धि के लिए समर्पित उद्योग या संगठन के प्रबंध, स्वैच्छिक महिला संगठन (जिनके अंतर्गत महिला कार्यकर्ता भी हैं), प्रशासन, आर्थिक विकास, स्वास्थ्य, शिक्षा या सामाजिक कल्याण का अनुभव है :

परंतु उनमें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों में से प्रत्येक का कम से कम एक सदस्य होगा ;

(ग) केन्द्रीय सरकार द्वारा नामनिर्दिष्ट एक सदस्य-सचिव जो –

(i) प्रबंध, संगठनात्मक संरचना या सामाजिक आंदोलन के क्षेत्र में विशेषज्ञ है, या

(ii) ऐसा अधिकारी है जो संघ की सिविल सेवा का या अखिल भारतीय सेवा का सदस्य है अथवा संघ के अधीन कोई सिविल पद धारण करता है और जिसके पास समुचित अनुभव है ।

4. अध्यक्ष और सदस्यों की पदावधि और सेवा की शर्तें – (1) अध्यक्ष और प्रत्येक सदस्य तीन वर्ष से अनधिक ऐसी अवधि के लिए पद धारण करेगा जो केन्द्रीय सरकार इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे ।

(2) अध्यक्ष या कोई सदस्य (ऐसे सदस्य-सचिव से भिन्न जो संघ की सिविल सेवा का या अखिल भारतीय सेवा का सदस्य है अथवा संघ के अधीन कोई सिविल पद धारण करता है) केन्द्रीय सरकार को संबोधित लेख द्वारा किसी भी समय, यथास्थिति, अध्यक्ष या सदस्य का पद त्याग सकेगा ।

(3) केन्द्रीय सरकार, किसी व्यक्ति को, उपधारा (2) में निर्दिष्ट अध्यक्ष या सदस्य के पद से हटा देगी यदि वह व्यक्ति –

(क) अनुन्मोचित दिवालिया हो जाता है ;

(ख) ऐसे किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया और कारावास से दंडादिष्ट किया जाता है जिसमें केन्द्रीय सरकार की राय में नैतिक अधमता अंतर्ग्रस्त है ;

(ग) विकृत्तचित्त का हो जाता है और सक्षम न्यायालय की ऐसी घोषणा विद्यमान है ;

(घ) कार्य करने से इनकार करता है या कार्य करने में असमर्थ हो जाता है ;

(ङ) आयोग से अनुपस्थित रहने की इजाजत लिए बिना आयोग के लगातार तीन अधिवेशनों से अनुपस्थित रहता है ; या

(च) केन्द्रीय सरकार की राय में, उसने अध्यक्ष या सदस्य के पद का इस प्रकार दुरुपयोग किया है कि ऐसे व्यक्ति का पद पर बना रहना लोकहित के लिए अहितकर है :

परन्तु इस खंड के अधीन किसी व्यक्ति को तब तक नहीं हटाया जाएगा जब तक कि उस व्यक्ति को इस विषय में सुनवाई का उचित अवसर नहीं दे दिया गया है ।

(4) उपधारा (2) के अधीन या अन्यथा होने वाली रिक्ति नए नामनिर्देशन द्वारा भरी जाएगी ।

(5) अध्यक्ष और सदस्यों को संदेय वेतन और भत्ते, और उनकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें वे होंगी जो विहित की जाएं ।

5. आयोग के अधिकारी और अन्य कर्मचारी – (1) केन्द्रीय सरकार आयोग के लिए ऐसे अधिकारियों और कर्मचारियों की व्यवस्था करेगी जो इस अधिनियम के अधीन आयोग के कृत्यों का दक्षतापूर्ण पालन करने के लिए आवश्यक हों ।

(2) आयोग के प्रयोजनों के लिए नियुक्त अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को संदेय वेतन और भत्ते और उनकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें वे होंगी जो विहित की जाएं ।

6. वेतन और भत्तों का अनुदान में से संदाय किया जाना – अध्यक्ष और सदस्यों को संदेय वेतन और भत्ते तथा प्रशासनिक व्यय, जिनके अंतर्गत धारा 5 में निर्दिष्ट अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को संदेय वेतन, भत्ते और पेंशन भी हैं, धारा 11 की उपधारा (1) में निर्दिष्ट अनुदानों में से संदत्त किए जाएंगे ।

7. रिक्तियों आदि से आयोग की कार्यवाहियों का अविधिमान्य न होना – आयोग का कोई भी कार्य या कार्यवाही आयोग में कोई रिक्ति विद्यमान होने या उसके गठन में त्रुटि होने के आधार पर ही प्रश्नगत या अविधिमान्य नहीं होगी ।

8. आयोग की समितियां – (1) आयोग ऐसी समितियां नियुक्त कर सकेगा जो ऐसे विशेष प्रश्नों पर विचार करने के लिए आवश्यक हों जो आयोग द्वारा समय-समय पर उठाए जाएं ।

(2) आयोग को उपधारा (1) के अधीन नियुक्त किसी समिति के सदस्यों के रूप में, ऐसे व्यक्तियों में से जो आयोग के सदस्य नहीं हैं, उतने व्यक्ति सहयोजित करने की शक्ति होगी जितने वह उचित समझे और इस प्रकार सहयोजित व्यक्तियों को समिति के अधिवेशनों में

उपस्थित रहने तथा उसकी कार्यवाहियों में भाग लेने का अधिकार होगा किन्तु उन्हें मतदान का अधिकार नहीं होगा ।

(3) इस प्रकार सहयोजित व्यक्ति समिति के अधिवेशनों में उपस्थित होने के लिए ऐसे भत्ते प्राप्त करने के हकदार होंगे जो विहित किए जाएं ।

9. प्रक्रिया का आयोग द्वारा विनियमित किया जाना – (1) आयोग या उसकी समिति का अधिवेशन जब भी आवश्यक हो किया जाएगा और वह ऐसे समय और स्थान पर किया जाएगा जो अध्यक्ष ठीक समझे ।

(2) आयोग अपनी प्रक्रिया तथा अपनी समितियों की प्रक्रिया स्वयं विनियमित करेगा ।

(3) आयोग के सभी आदेश और विनिश्चय सदस्य-सचिव द्वारा या इस निमित्त सदस्य-सचिव द्वारा सम्यक् रूप से प्राधिकृत आयोग के किसी अन्य अधिकारी द्वारा अधिप्रमाणित किए जाएंगे ।

अध्याय 3

आयोग के कृत्य

10. आयोग के कृत्य – (1) आयोग निम्नलिखित सभी या किन्हीं कृत्यों का पालन करेगा, अर्थात् :–

(क) महिलाओं के लिए संविधान और अन्य विधियों के अधीन उपबंधित रक्षोपायों से संबंधित सभी विषयों का अन्वेषण और परीक्षा करना ;

(ख) उन रक्षोपायों के कार्यकरण के बारे में प्रति वर्ष, और ऐसे अन्य समयों पर जो आयोग ठीक समझे, केन्द्रीय सरकार को रिपोर्ट देना ;

(ग) ऐसी रिपोर्टों में महिलाओं की दशा सुधारने के लिए संघ या किसी राज्य द्वारा उन रक्षोपायों के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए सिफारिशें करना ;

(घ) संविधान और अन्य विधियों के महिलाओं को प्रभावित करने वाले विद्‌यमान उपबंधों का समय-समय पर पुनर्विलोकन करना और उनके संशोधनों की सिफारिश करना जिससे कि ऐसे विधानों में किसी कमी, अपर्याप्तता या त्रुटियों को दूर करने के लिए उपचारी विधायी उपायों का सुझाव दिया जा सके ;

(ङ) संविधान और अन्य विधियों के उपबंधों के महिलाओं से संबंधित अतिक्रमण के मामलों को समुचित प्राधिकारियों के समक्ष उठाना ;

(च) निम्नलिखित से संबंधित विषयों पर शिकायतों की जांच करना और स्वप्रेरणा से ध्यान देना –

(i) महिलाओं के अधिकारों का वंचन ;

(ii) महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने के लिए और समता तथा विकास का उद्देश्य प्राप्त करने के लिए भी अधिनियमित विधियों का अक्रियान्वयन ;

(iii) महिलाओं की कठिनाइयों को कम करने और उनका कल्याण सुनिश्चित करने तथा उनको अनुतोष उपलब्ध कराने के प्रयोजनार्थ नीतिगत विनिश्चयों, मार्गदर्शक सिद्धांतों या अनुदेशों का अनुपालन,

और ऐसे विषयों से उद्भूत प्रश्नों को समुचित प्राधिकारियों के समक्ष उठाना ;

(छ) महिलाओं के विरुद्ध विभेद और अत्याचारों से उद्भूत विनिर्दिष्ट समस्याओं या स्थितियों का विशेष अध्ययन या अन्वेषण कराना और बाधाओं का पता लगाना जिससे कि उनको दूर करने की कार्य योजनाओं की सिफारिश की जा सके ;

(ज) संवर्धन और शिक्षा संबंधी अनुसंधान करना जिससे कि महिलाओं का सभी क्षेत्रों में सम्यक् प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के उपायों का सुझाव दिया जा सके और उनकी उन्नति में अड़चन डालने के लिए उत्तरदायी कारणों का पता लगाना जैसे कि आवास

और बुनियादी सेवाओं की प्राप्ति में कमी, उबाऊपन और उपजीविकाजन्य स्वास्थ्य परिसंकटों को कम करने के लिए और महिलाओं की उत्पादकता की वृद्धि के लिए सहायक सेवाओं और प्रौद्योगिकी की अपर्याप्तता ;

(झ) महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग लेना और उन पर सलाह देना ;

(ञ) संघ और किसी राज्य के अधीन महिलाओं के विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना ;

(ट) किसी जेल, सुधार गृह, महिलाओं की संस्था या अभिरक्षा के अन्य स्थान का, जहां महिलाओं को बंदी के रूप में या अन्यथा रखा जाता है, निरीक्षण करना या करवाना, और उपचारी कार्रवाई के लिए, यदि आवश्यक हो, संबंधित प्राधिकारियों से बातचीत करना ;

(ठ) बहुसंख्यक महिलाओं को प्रभावित करने वाले प्रश्नों से संबंधित मुकदमों के लिए धन उपलब्ध कराना ;

(ड) महिलाओं से संबंधित किसी बात के, और विशिष्टतया उन विभिन्न कठिनाइयों के बारे में जिनके अधीन महिलाएं कार्य करती हैं, सरकार को समय-समय पर रिपोर्ट देना ;

(ढ) कोई अन्य विषय जिसे केन्द्रीय सरकार उसे निर्दिष्ट करे ।

(2) केन्द्रीय सरकार, उपधारा (1) के खण्ड (ख) में निर्दिष्ट सभी रिपोर्टों को संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगी और उसके साथ संघ से संबंधित सिफारिशों पर की गई या की जाने के लिए प्रस्तावित कार्रवाई तथा यदि कोई ऐसी सिफारिशें अस्वीकृत की गईं हैं तो अस्वीकृति के कारणों को स्पष्ट करने वाला ज्ञापन भी होगा ।

(3) जहां कोई ऐसी रिपोर्ट या उसका कोई भाग किसी ऐसे विषय से संबंधित है जिसका किसी राज्य सरकार से संबंध है वहां आयोग ऐसी रिपोर्ट या उसके भाग की एक प्रति उस राज्य सरकार को भेजेगा जो उसे राज्य के विधान-मंडल के समक्ष रखवाएगी और उसके साथ राज्य से संबंधित सिफारिशों पर की गई या की जाने के लिए प्रस्तावित कार्रवाई

तथा यदि कोई ऐसी सिफारिशें अस्वीकृत की गईं हैं तो अस्वीकृति के कारणों को स्पष्ट करने वाला ज्ञापन भी होगा ।

(4) आयोग को उपधारा (1) के खंड (क) या खंड (च) के उपखंड (i) में निर्दिष्ट किसी विषय का अन्वेषण करते समय और विशिष्टतया निम्नलिखित विषयों के संबंध में वे सभी शक्तियां होंगी जो वाद का विचारण करने वाले सिविल न्यायालय की हैं, अर्थात् :-

(क) भारत के किसी भी भाग से किसी व्यक्ति को समन करना और हाजिर कराना तथा शपथ पर उसकी परीक्षा करना ;

(ख) किसी दस्तावेज को प्रकट और पेश करने की अपेक्षा करना ;

(ग) शपथपत्रों पर साक्ष्य ग्रहण करना ;

(घ) किसी न्यायालय या कार्यालय से किसी लोक अभिलेख या उसकी प्रतिलिपि की अपेक्षा करना ;

(ङ) साक्षियों और दस्तावेजों की परीक्षा के लिए कमीशन निकालना ; और

(च) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाए ।

अध्याय 4

वित्त, लेखे और लेखापरीक्षा

11. केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदान – (1) केन्द्रीय सरकार, संसद् द्वारा इस निमित्त विधि द्वारा किए गए सम्यक् विनियोग के पश्चात्, आयोग को अनुदानों के रूप में ऐसी धनराशि का संदाय करेगी जो केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए उपयोग किए जाने के लिए ठीक समझे ।

(2) आयोग इस अधिनियम के अधीन कृत्यों का पालन करने के लिए उतनी धनराशि खर्च कर सकेगा जितनी वह ठीक समझे और वह धनराशि उपधारा (1) में निर्दिष्ट अनुदानों में से संदेय व्यय माना जाएगा ।

12. लेखे और संपरीक्षा – (1) आयोग, समुचित लेखा और अन्य सुसंगत अभिलेख रखेगा और लेखाओं का वार्षिक विवरण ऐसे प्ररूप में तैयार करेगा जो केन्द्रीय सरकार भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक से परामर्श करके विहित करे ।

(2) आयोग के लेखाओं की संपरीक्षा नियंत्रक-महालेखापरीक्षक ऐसे अंतरालों पर करेगा जो उसके द्वारा विनिर्दिष्ट किए जाएं और उस संपरीक्षा के संबंध में उपगत कोई व्यय आयोग द्वारा नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को संदेय होगा ।

(3) नियंत्रक-महालेखापरीक्षक और इस अधिनियम के अधीन आयोग के लेखाओं की संपरीक्षा के संबंध में उसके द्वारा नियुक्त किसी व्यक्ति को उस संपरीक्षा के संबंध में वही अधिकार और विशेषाधिकार तथा प्राधिकार होंगे जो नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को सरकारी लेखाओं की संपरीक्षा के संबंध में साधारणतया होते हैं और उसे विशिष्टतया बहियां, लेखा, संबंधित वाउचर और अन्य दस्तावेज और कागज-पत्र पेश किए जाने की मांग करने और आयोग के किसी भी कार्यालय का निरीक्षण करने का अधिकार होगा ।

(4) नियंत्रक-महालेखापरीक्षक या उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त किसी अन्य व्यक्ति द्वारा यथाप्रमाणित आयोग का लेखा और साथ ही उस पर संपरीक्षा रिपोर्ट आयोग द्वारा केन्द्रीय सरकार को प्रति वर्ष भेजी जाएगी ।

13. वार्षिक रिपोर्ट – आयोग, प्रत्येक वित्तीय वर्ष के लिए अपनी वार्षिक रिपोर्ट, जिसमें पूर्ववर्ती वित्तीय वर्ष के दौरान उसके क्रियाकलापों का पूर्ण विवरण होगा, ऐसे प्ररूप में और ऐसे समय पर, जो विहित किया जाए, तैयार करेगा और उसकी एक प्रति केन्द्रीय सरकार को भेजेगा ।

14. वार्षिक रिपोर्ट और संपरीक्षा रिपोर्ट का संसद् के समक्ष रखा जाना – केन्द्रीय सरकार वार्षिक रिपोर्ट, रिपोर्ट की प्राप्ति के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगी जिसके साथ उसमें अंतर्विष्ट सिफारिशों पर, जहां तक उनका संबंध केन्द्रीय सरकार से

है, की गई कार्रवाई और यदि कोई ऐसी सिफारिशें अस्वीकृत की गईं हैं तो अस्वीकृति के कारण का ज्ञापन और संपरीक्षा रिपोर्ट होगी ।

अध्याय 5

प्रकीर्ण

15. आयोग के अध्यक्ष, सदस्यों और कर्मचारिवृंद का लोक सेवक होना – आयोग का अध्यक्ष, उसके सदस्य, अधिकारी और अन्य कर्मचारी भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थ में लोक सेवक समझे जाएंगे ।

16. केन्द्रीय सरकार आयोग से परामर्श करेगी – केन्द्रीय सरकार, महिलाओं को प्रभावित करने वाले सभी प्रमुख नीतिगत मामलों पर आयोग से परामर्श करेगी ।

17. नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों को क्रियान्वित करने के लिए नियम राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) धारा 4 की उपधारा (5) के अधीन अध्यक्ष और सदस्यों को और धारा 5 की उपधारा (2) के अधीन अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को संदेय वेतन और भत्ते तथा उनकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें ;

(ख) धारा 8 की उपधारा (3) के अधीन सहयोजित व्यक्तियों द्वारा समिति के अधिवेशनों में उपस्थित होने के लिए भत्ते ;

(ग) धारा 10 की उपधारा (4) के खंड (च) के अधीन अन्य विषय ;

(घ) वह प्ररूप जिसमें लेखाओं का वार्षिक विवरण धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन रखा जाएगा ;

(ङ) वह प्ररूप जिसमें और वह समय जब वार्षिक रिपोर्ट धारा 13 के अधीन तैयार की जाएगी ;

(च) कोई अन्य विषय जिसे विहित किया जाना अपेक्षित है या किया जाए ।

(3) इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	290.00
4.	मानव अधिकार – डा. शिवदत्त शर्मा – 2006	340	120	60.00
5.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान (सिंधी भाषा में)	1998	कीमत रु. 45/-
4. बहुभाषी संविधान शब्दावली	1986	कीमत रु. 12/-
5. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

Cover iv

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/ product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in